स्वामी विवेकानन्द जीवन-दर्शन



लेखकद्वय :

डा. निर्मल कौशिक

डा. रमन मरवाहा

स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती (150वीं) जन्मशती
समारोह आयोजन समिति, फरीदकोट।

स्वामी विवेकानन्द 150वीं जन्म शताब्दी विचार संगोष्ठी





स्वामी विवेकानन्द : जीवन-दर्शन

लेखकद्वय
प्रिंसीपल (डा.) निर्मल कौशिक,
मालवा डिग्री कॉलेज फार गर्ल्ज,
कोटकपूरा (पंजाब)
एवं
डा. रमन मरवाहा, पुस्तकालयाध्यक्ष,
सरकारी बृजेन्द्रा कॉलेज,
फरीदकोट (पंजाब)

स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती (150वीं) जन्मशती,
समारोह आयोजन समिति, फरीदकोट।

SWAMI VIVEKANAND : JEEWAN DARSHAN

स्वामी विवेकानन्द : जीवन-दर्शन

Writers–Dr. Nirmal Kaushik; Dr. Raman Marwaha

लेखकद्वय-डा. निर्मल कौशिक, डा. रमन मरवाहा

प्रथम संस्करणःसितम्बर, 2013.

मूल्य : तीस रुपये

प्रकाशक :
स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती (150वीं) जन्मशती
समारोह आयोजन समिति,
फरीदकोट - 151203 (पंजाब)

मुद्रक : मन्दाला आर्ट प्रिंटरज़,
फरीदकोट — 151203
सम्पर्क सूत्र : 01639--250121

अनुक्रम

समर्पण

जिन्होने आजीवन स्वामी विवेकानन्द जी के आदर्शों और सिद्धांतों को जीवन में धारण किया। पितृतुल्य परमादरणीय स्वर्गीय प्रोफैसर सुखदेव शर्मा, व्याख्याता शहज़ादानन्द कालेज फार गर्ल्ज़, अमृतसर को सादर समर्पित।



प्रशंसनीय कदम

स्वामी विवेकानन्द जी की (150वीं) सार्द्धशती जन्म समारोह आयोजन समिति फरीदकोट की ओर से आयोजित विभिन्न समारोहों के माध्यम से उनके सन्देश को घर घर पहुंचाने का सराहनीय कार्य किया जा रहा है। स्वामी विवेकानन्द जी ने विश्व धर्म संसद शिकागों में 1893 में भारत की संस्कृति और हिन्दू धर्म की छवि को सारे संसार के सामने इस प्रकार प्रस्तुत किया कि पूरे विश्व में उनका यश फैल गया। 'अध्यात्म' के क्षेत्र में अग्रणी भारत विश्वगुरु की उपाधि से सम्मानित होते हुए भी अन्य देशों की दृष्टि में घृणा और हीनता का पात्र बना हुआ था। स्वामी जी ने विश्व धर्म संसद के मंच से शिकागों में विश्व धर्म--अधिकारी प्रतिनिधियों को इस बात से परिचित कराया कि भारतीय संस्कृति और भारतीय हिन्दू धर्म विश्व धर्म की एक अमीर विरासत है। 'वेदान्त' के सिद्धान्तों एवं अपनी तर्क शक्ति द्वारा उन्होंने बताया कि हर मनुष्य के अन्दर एक दिव्य (अलौकिक) शक्ति है जिसे साधना, ध्यान और एकाग्रता द्वारा जाग्रत किया जा सकता है। मनुष्य के अन्दर छिपी दिव्य शक्ति को प्रकट करना ही वास्तव में 'धर्म' है। भारतीय संस्कृति--वसुधैव कुटुम्बकम् की संस्कृति है-- हिन्दू धर्म सभी जीवो मे उस परम--शक्ति के विद्यमान होने में विश्वास करता है। छोटे--बड़े सभी जीवों में ईश्वर विद्यमान है तो फिर भिन्नता कैसी?

उन्होंने विदेशों का ही नहीं पूरे भारत कर भ्रमण करके भारत को जानने की कोशिश की। उन्होंने भारत के नवनिर्माण हेतु--निर्धन और दीनहीन लोगों की सहायता के लिए हाथ बढ़ाया। उन्हें भारत के उत्थान के लिए एक मार्ग सूझ गया था। उन्होंने युवा शक्ति को जाग्रत किया और बेसहारा लोगों की सहायता के लिए अपने अन्दर की शक्ति को पहचानने की बात कही। भारतीय संस्कृति और हिन्दूधर्म की नैतिक मान्यताओं को जीवन में धारण करने और चरित्र निर्माण के लिए त्याग की भावना जगाई। राष्ट्र के गौरव हेतु बलिदान देने की परम्परा से लोगों को परिचित कराया।

देश के अतीत के गौरव 'अध्यात्म' और 'विचार शक्ति' को साकारात्मक दिशा प्रदान की। उन्होंने कहा कि जिस व्यक्ति को अपने आप पर विश्वास नहीं है वही नास्तिक है। जितनी शक्ति हमने अपने ज्ञान द्वारा भौतिक विकास में लगाई है अगर उतनी ही शक्ति हम 'अध्यात्म' के क्षेत्र में लगा दें तो हम अपने अन्दर उस दिव्य शक्ति स्वरूप प्रभु के 'दर्शन' कर सकते है। अपनी क्षमता और शक्ति की पहचान ही ईश्वर प्राप्ति है। इसके लिए प्रबल इच्छा शक्ति, दृढ़ संकल्प और एकाग्रता का होना बहुत आवश्यक है। किसी भी कार्य की सफलता के लिए यह तीनों गुण अवश्य होने चाहिए।

स्वामी जी का विचार था कि हिन्दुत्व का सबसे बड़ा बल 'कर्मयोग' है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में भी कर्म करने और फल की इच्छा न रखने पर बल

दिया है। स्वामी जी का कहना था कि प्रत्येक जीव को ईश्वर ने किसी कार्य के लिए यहां भेजा है। मगर मनुष्य कभी यह जानने की कोशिश नहीं करता कि उसे अपने जीवन में क्या कुछ करना है। स्वामी जी ने युवा शक्ति को सन्देश दिया कि उठो, जागो और तब तक चलते रहो जब तक तुम्हें लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।

आज हम उनके 150वें जन्म दिवस पर अगर हम यह संकल्प लें कि हम अपने राष्ट्र हित में– निर्धन और दीनहीन लोगों की सहायता करेंगे और सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में सहयोग करेंगे– भ्रष्टाचार और बेईमानी जैसी समाज को पतन की ओर ले आने वाली बुराइयों को समाज में बढ़ने नहीं देंगे– तो निश्चित रूप से हम स्वामी जी के स्वप्नों को साकार कर सकेंगे।

निस्सन्देह स्वामी जी हमारे राष्ट्र का गौरवशाली व्यक्तित्व और भारत की युवा शक्ति के प्रेरक थे। हिन्दूधर्म के विश्व प्रसिद्ध प्रचारक और भारतीय संस्कृति के उद्धारक के रूप में उनके सन्देश आज भी हमारा पथ प्रदर्शन कर रहे हैं। निर्धनों के मसीहा बनकर उन्होंने समूचे विश्व को मानवता का सन्देश दिया। उनका यह अमर सन्देश "भारत जागो, विश्व जगाओं" निश्चय ही– विश्व में जागृति लाने में सक्षम सिद्ध होगा।

मुझे स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती समारोह आयोजन समिति, फरीदकोट द्वारा संयोजक श्री सुरेन्द्र गेरा जी के नेतृत्व में आयोजित अनेक समारोहों में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसके लिए मैं आयोजन समिति के समूह सदस्यों को धन्यवाद देता हूँ।

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई है कि स्वामी विवेकानन्द जी की 150वीं जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में डा. निर्मल कौशिक व डा. रमन मरवाहा द्वारा स्वामी जी के जीवन और दर्शन पर प्रकाश डालने हेतु प्रस्तुत लघु पुस्तिका स्वामी विवेकानन्द – जीवन दर्शन' प्रकाशित की जा रही है। स्वामी जी के जीवन का महत्त्वपूर्ण तथ्यों और विचारों से अवगत कराने तथा युवाओं और युवतियों का भविष्य उज्ज्वल करने हेतु यह प्रयास नितान्त स्तुत्य है। स्वामी जी के अनुभव और विचार निस्सन्देह भारत की गरिमा को विश्व स्तर पर प्रसारित करने में सक्षम हैं। यह लघु पुस्तिका इसी प्रयास की एक कड़ी है। मैं इस मंगलमयी प्रयास के लिए दोनों विद्वान लेखकों डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ।

दीप मल्होत्रा
एम.एल.ए. फरीदकोट



शुभ सन्देश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा द्वारा स्वामी विवेकानन्द जीवन दर्शन पुस्तक प्रकाशित की गई है । दोनो विद्वान लेखक जिला फिरोजपुर से ही सम्बन्ध रखते हैं । लेखक द्वय उच्च कोटि के साहित्यकार हैं इन्होने पंजाब के साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया है ।

फिरोजपुर शहर में पले, बढ़े और शिक्षा प्राप्त डा. निर्मल कौशिक फिरोजपुर का गौरव हैं। आपके पिता पं. कर्म चन्द शास्त्री संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित और सम्मानित शिक्षक थे । डा. रमन मरवाहा जिला फिरोजपुर के पुस्तकालयाध्यक्ष हैं ।

स्वामी विवेकानन्द जी की 150 वीं जन्म शती के शुभ अवसर पर इन दो विद्वान लेखकों ने प्रस्तुत पुस्तक में स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन दर्शन पर संक्षिप्त सामग्री प्रस्तुत कर लोकोपकार का कार्य किया है । मैं इस पुण्य कार्य के लिए दोनो विद्वान लेखकों डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा को अपनी ओर से हार्दिक बधाई तथा शुभकामनाएँ देता हूँ ।

शुभकामनाओं सहित।

कमल शर्मा
प्रधान
भारतीय जनता पार्टी
पंजाब

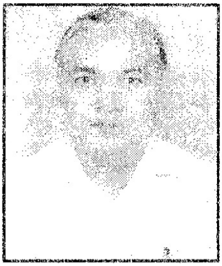


मांगलिक कामनाएँ

अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती जन्मोत्सव वर्ष के अवसर पर डा. निर्मल कौशिक और डा. रमन मरवाहा द्वारा स्वामी विवेकानन्द जीवन दर्शन पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वान डा. निर्मल कौशिक एव डा रमन मरवाहा ने हिन्दी साहित्य की बहुत सेवा की है । मैं इस उपयोगी कार्य के लिए दोनो लेखको डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा को मंगलकामनाएँ देती हूँ । आशा करती हूँ कि दोनो विद्वान लेखक इसी प्रकार हिन्दी साहित्य की सेवा करते रहेंगे ।

मंगल कामनाओं सहित

बीबी गुरचरण कौर, पंजगराई
उप प्रधान
भारतीय जनता पार्टी
पंजाब



स्तुत्य कार्य

हार्दिक प्रसन्नता का विषय है कि स्वामी विवेकानन्द जी के 150 वे जन्म दिवस को पूरे विश्व में हर्षोल्लास के साथ पूरे वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है । स्वामी जी ने भारतीय संस्कृति और धर्म की रक्षा हेतु जनचेतना लाने का बीड़ा उठाया और विदेशी धरती पर अपने विचारों से पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति को झकझोर दिया । उन्होने किसी की निन्दा किये बिना भारतीय धर्म और दर्शन से शिकागो के विश्वधर्म सम्मेलन में एकत्रित सभासदों को अपने विश्वासपात्र बना लिया । सन्तप्त मानव जाति को एक सन्तोष प्राप्त हुआ । 39 वर्ष की आयु में ही उन्होने सौ वर्ष की आयु से भी अधिक कार्य कर दिखाया । इस अवसर पर डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा ने इस यज्ञ में आहूति के रूप में लघु पुस्तिका स्वामी विवेकानन्द जीवन दर्शन प्रकाशित कर निस्सन्देह एक महान कृत्य किया है । इस मंगल कार्य के लिए मैं इन दोनो विद्वानो को हार्दिक बधाई एवं शुभ कामनाएँ देता हूँ । निश्चय ही यह एक स्तुत्य कार्य है इससे युवा पीढी को एक नई दिशा मिलेगी ।

डा. दीपक गोयल
Ex. DAUO
फरीदकोट ।

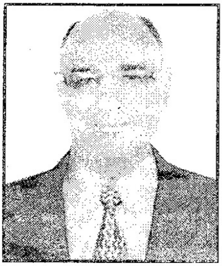


मंगलकामनाएं

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा जी ने अत्यन्त परिश्रम से स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन और दर्शन पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित की है। स्वामी विवेकानन्द जी एक युगपुरुष थे। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों से युवा शक्ति को एक नई चेतना प्रदान की। हिन्दू धर्म–संस्कृति और भारत की गरिमा को विश्वभर के समक्ष प्रकाशित किया। निस्सन्देह दोनों विद्वान लेखकों द्वारा लिखी गई यह पुस्तक युवाओं के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

इस पुण्यकर्म के लिए मेरी ओर हार्दिक मंगल कामनाएं।

सुरेन्द्र गेरा,
संयोजक,
स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती
जन्मशताब्दी समारोह आयोजन समिति,
जिला फरीदकोट – 151203 (पंजाब)



शुभमस्तु

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती जन्मोत्सव (150) वर्षीय समारोहों के उपलक्ष्य में श्रद्धासुमन के रूप में डा. निर्मल कौशिक, प्रिंसीपल (मालवा डिग्री कालेज फार गर्ल्ज, कोटकपूरा) तथा डा. रमन मरवाहा (पुस्तकालयाध्यक्ष सरकारी बृजेन्द्र कालेज फरीदकोट) ने एक लघु पुस्तिका स्वामी विवेकानन्द जीवनदर्शन प्रकाशित की है ।

मैं इस शुभकार्य के लिए और विशेष रूप से युवा विद्यार्थी वर्ग के लिए रची गई इस पुस्तक को प्रकाशित करने हेतु दोनों विद्वान लेखकों डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा को हार्दिक बधाई एवं शुभ कामनाएँ देता हूँ ।

दोनों विद्वान लेखक मेरे परममित्र है और हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वान है । यह पुस्तक युवा वर्ग के लिए लाभदायक सिद्ध होगी ऐसा मेरा विश्वास है ।

शुभ कामनाओं सहित ।

पं. हरि राम खिंदड़ी
प्रधान
ब्राह्मण सभा (रजि०)
फिरोजपुर शहर ।



मंगलकामनाएँ

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती जन्मोत्सव वर्ष के उपलक्ष्य में डा. निर्मल कौशिक और डा. रमन मरवाहा द्वारा स्वामी विवेकानन्द जीवन दर्शन पुस्तक प्रकाशित कर जनसामान्य को स्वामी जी के जीवन की जानकारी देने का प्रयास किया गया है । सरकारी बृजेन्द्र कालेज से सेवा मुक्त हिन्दी विभागाध्यक्ष डा निर्मल कौशिक तथा सरकारी बृजेन्द्र कालेज के वर्तमान पुस्तकालयाध्यक्ष डा. रमन मरवाहा हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वान है और इन्होने हिन्दी साहित्य की बहुत सेवा की है । मैं स्वामी विवेकानन्द जीवन दर्शन पुस्तक प्रकाशित कर लोक हित में स्वामी जी के बताए मार्ग पर चलने हेतु प्रस्तुत प्रेरक–पुस्तक प्रकाशित करने के इस समाज उपयोगी कार्य के लिए दोनो लेखको डा. निर्मल कौशिक तथा डा. रमन मरवाहा को हार्दिक बधाई तथा मंगलकामनाएँ देता हूँ । आशा करता हूँ कि भविष्य में भी इसी प्रकार साहित्य और समाज की सेवा करते रहेंगे ।

मंगलकामनाओं सहित

डा: शुभदर्शन
सम्पादक
पब्लिक दिलासा
सांध्य दैनिक, अमृतसर (पंजाब)

भूमिका

स्वामी विवेकानन्द जी ने प्रकाश स्तम्भ के समान युवा वर्ग के प्रेरणास्रोत बनकर उनका जीवनपथ आलोकित किया1 उनका समस्त जीवन राष्ट्र और मानव समाज को समर्पित था। उनके जीवन की प्रत्येक घटना मानव जीवन में क्रान्ति लाने में सक्षम है। हमने उनके जीवन से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया। स्वामी जी के 150वें जन्मोत्सव के अवसर पर प्रस्तुत पुस्तक तैयार करने का विचार उनके आशीर्वाद का ही प्रतिफल है। स्वामी जी के विचारों को युवा पीढी तक पहुँचाना और उनके सन्देश को घर–घर पहुँचाना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है। स्वामी जी के अनुसार आध्यात्मिक दिव्य शक्तियों को जानना ही जीवन की सार्थकता है। यही ज्ञान है, यही विद्या है, यही वास्तविक प्रगति है। यही जीवन की सफलता है। स्वामी जी के सार्द्धशती जन्मोत्सव वर्ष में समारोहों की श्रृंखला के सुचारू संचालन एवं आयोजनों हेतु अनेक समितियों का गठन किया गया है। हमें भी अनेक समारोहो में स्वामी जी के जीवन और दर्शन पर कुछ विचार व्यक्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्हीं विचारों के आलोक में हमने कुछ विचारों को संजोकर यह लघु पुस्तिका तैयार की है। युवा वर्ग के अन्दर असीम ऊर्जा और शक्ति होती है। स्वामी जी ने कहा अगर युवा वर्ग इसी असीम और अलौकिक ऊर्जा शक्ति को एकत्रित कर इसका सदुपयोग करे तो मानव समाज का उद्धार हो सकता है। स्वामी जी के इन्हीं अमूल्य विचारों को संचित करके हमने यह लघु पुस्तिका प्रकाशित की है। संक्षिप्त रूप से तैयार की गई यह पुस्तिका युवा वर्ग का मार्ग दर्शन करने और अपने अन्दर समाहित शक्ति को पहचानने मे अवश्य सहायक सिद्ध होगी। हमारा विश्वास है कि विद्यार्थी वर्ग के लिए यह पुस्तिका विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होगी। इस पुस्तक के लेखन में लेखकद्वय द्वारा अनेक पुस्तकों से सहायता ली गई है। हम उन विद्वान लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

हम श्री रिखी राम जी धवन, एन.आर.आई. एवं डा. दीपक गोयल, पूर्व जिला आयुर्वेद अधिकारी, फरीदकोट का हार्दिक धन्यवाद करते है जिन्होंने इस परियोजना को साकार अभिव्यक्ति दी। जिनके सहयोग के बिना इस पुस्तक का अस्तित्व कदापि सम्भव न हो पाता।

इस पुस्तक के प्रकाशन में श्री सुरेन्द्र गेरा, जिला संयोजक, स्वामी विवेकानन्द सार्द्धशती जन्म समारोह आयोजन समिति, जिला फरीदकोट की महत्तवपूर्ण भूमिका रही है। उनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन के बिना इस पुस्तक का प्रकाशन कदापि नहीं हो पाता। हम उनके प्रति कृतज्ञ है।

श्री तीर्थ राम वर्मा (जिला संघ चालक, फरीदकोट) ने इस पुस्तक के अशुद्धि संशोधन का कार्यभार संभालकर पुस्तक की तैयारी में सहयोग प्रदान किया। लेखकद्वय की ओर से बहुत–बहुत धन्यवाद। जिन महानुभावों ने अपने सन्देश भेजे हैं उनके प्रति आभार व्यक्त करना हमारा नैतिक दायित्व है। सभी का बहुत–बहुत धन्यवाद।

हम पुस्तक के मुद्रक श्री सुनील ग्रोवर, मन्दाला आर्ट प्रिंटरज़, फरीदकोट के प्रति भी आभार अभिव्यक्त करते है। जिन्होंने लेखकद्वय की कल्पना को साकार और सुन्दर अभिव्यक्ति प्रदान की। जिन्होने हमारे रेखाचित्र में रंग भरे और फलस्वरूप यह पुस्तक आज आपको हाथों में है। लेखकद्वय उनके प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करता है।

5 सितम्बर, 2013
शिक्षक दिवस

विनीत लेखकद्वय
डा. निर्मल कौशिक
डा. रमन मरवाहा

भारत को जानना है तो विवेकानन्द को पढ़ो। उनके जीवन में जो कुछ है वह उत्साहित करने वाला है, निराशा की तरफ ले जाने वाला कुछ भी नहीं।

रविन्द्र नाथ ठाकुर
नोबल पुरस्कार विजेता

यदि स्वामी विवेकानन्द जी जीवित होते तो मैं उनके चरणों में बैठा होता।

सुभाष चन्द्र बोस

Swami Vivekanand was practically India's First Cultural Ambassador to United States where Vivekananda had delivered the famous & Historic address at the Parliament of the World Religions in 1893 to tremendous applause.

Pranab Mukerjee
(Hon'ble President of India)

Swami Ji is one of the most cherished leaders who belong to the whole world.

Dr. APJ Abdul Kalam
(Hon'ble Former President of India)

पूरे विश्व में स्वामी जी का 150 साला समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है। भारत के इस महान सपूत का जन्म समारोह पंजाब सरकार भी उत्साह पूर्वक मना रही है।

स. प्रकाश सिंह बादल
मुख्यमंत्री पंजाब

जीवन यात्रा

12 जनवरी 1863 को कलकत्ता के 'दत्त' परिवार में एक ऐसे ही 'महापुरुष' ने जन्म लिया जिसने विश्वभर में भारतीय संस्कृति की ध्वजा फहराने का श्रेय अर्जित किया। पूरा विश्व आज भी उसे 'विवेकानन्द' के नाम से जानता है। आपका जन्म पिता श्री विश्वनाथ दत्त और माता भुवनेश्वरी देवी के घर हुआ। आपके पिता व्यवसाय से वकील थे और अनेक विषयों के ज्ञाता थे। आप कलकता हाई कोर्ट में वकील के तौर पर कार्य करते हुए अंग्रेजी और फारसी के ग्रन्थों का अध्ययन करते और परिवार में उनपर चर्चा भी करते।आप धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयों पर प्रगतिशील विचारों के साथ-साथ भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति के विषय में भी बहुत सजग थे। विश्वनाथ के पिता (विवेकानन्द के दादा) श्री दुर्गाचरण दत्त भी संस्कृत और फारसी के श्रेष्ठ विद्वान थे। विश्वनाथ नरेन के जन्म के पश्चात एक मठ में रहने लगे थे। उन्होने सन्यास ले लिया था।

माता भुवनेश्वरी देवी और पिता विश्वनाथ दत्त ने बालक के जन्म से ही इसका लालन पालन अत्यन्त लाड-प्यार से किया और अच्छे संस्कार दिए। इस बालक का नाम नरेन्द्र नाथ दत्त रखा गया। मगर सभी लोग अपनी सुविधा हेतु इसे ''नरेन' कह कर बुलाते थे। बालक नरेन अपने अद्भुत कृत्यों-क्रीडाओं से सभी बच्चों में, मित्रमण्डली में और अपने परिवार में आकर्षण का केन्द्र बना रहता। इसकी चंचलता से कई बार इनकी माता परेशान भी हो जाती थी। तब वह 'नरेन' को 'ॐ नमः शिवाय' का जाप करने को कहती तो वह जाप करने लगते और अपनी शरारत भूल जाते थे। आपकी माता धार्मिक विचारों वाली स्त्री थीं। उन्होने आप को बचपन में ही रामायण, महाभारत, गीता, पुराणों के अनेक प्रसंग सुना कर नैतिक शिक्षा और चरित्र निर्माण हेतु उपदेश दिए। जिनका आपके मन पर गहरा प्रभाव पडा।

बचपन में नरेन्द्रनाथ ('नरेन') अपने साथियों के साथ भी 'समाधि' लगाने की क्रीडा करता था। नरेन प्रायः राम, सीता अथवा शिव की मूर्ति के आगे ध्यानस्थ मुद्रा में घंटो बैठा रहता और उसे अपने इर्द गिर्द की सुध न रहती। वह साधु संतो से मिलकर अत्यन्त प्रसन्न होता और अपनी आवश्यक वस्तुएँ उन्हे दे देता था। सात वर्ष की अवस्था में नरेन्द्र नाथ को ईश्वरचन्द्र विद्यासागर द्वारा स्थापित मैट्रापलीटन इन्स्टीच्यूशन में अध्ययनार्थ भेजा गया। विवेकशील बालक 'नरेन' अपने पाठ-बहुत की जल्दी याद कर लेता था। अध्ययन के साथ-साथ नरेन अनेक प्रकार के खेलकूद, भागदौड- मुक्केबाजी, तलवारबाजी, कुश्ती, लाठी चलाना आदि में भी भाग लेता। कभी कभी समाधि में भी लीन हो जाता। उसकी सबसे प्रिय खेल 'राजा का दरबार' थी। इसमे सदा राजा की भूमिका में नरेन ही होता था। नरेन को जीव जन्तुओं से बहुत लगाव था आपके मित्र मण्डल में गाय, बन्दर, बकरी और पक्षियों में मोर, कबूतर और तोता आदि भी सम्मिलित थे। नरेन बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। आपको कई तरह के पकवान तैयार करने

का शौक था वह कई तरह के मसाले स्वयं तैयार करके बाजार से स्वयं सब्जियाँ लाते और उन्हे पकाते थे । उन्हे व्यायाम करने का भी शौक था । उन्होने एक जिम भी तैयार किया । ज्यों-2 नरेन बडा हो रहा था। उसकी रुचि पढ़ाई में निरन्तर बढ़ रही थी । कुछ घरेलू परिस्थितियों के कारण उसे पढ़ाई स्थगित करनी पडी । दो वर्ष के लिए उसके पिता नरेन को कलकता से बाहर ले गए । वापिस लौटकर उसे तीन वर्षों की पढ़ाई एक वर्ष में सम्पन्न करनी पड़ी। धीरे-धीरे नरेन ने 1881 में एफ. ए. और 1884 में बी.ए. की परीक्षा पास कर ली । साथ ही साथ उसके मन में धर्म के अस्तित्व के विषय में गम्भीर प्रश्न भी उठने लगे थे । अन्य युवकों की तरह वह ब्रह्मो समाज का सदस्य बन गया । वह केशव चन्द्रसेन के भाषणों से अत्यन्त प्रभावित हुआ । इसी बीच नरेन ने पाँच वर्ष तक संगीत विद्या भी सीख ली थी । उन्होने संगीत के अनेक वाद्य यंत्र बजाने सीख लिए थे और गायन में साधना कर मधुर स्वर में गाने लगे थे । उनके गायन को सराहा जाने लगा था । उन्हे बौद्धिक चर्चा में विशेष आनन्द मिलता था ।

हिन्दू धर्म की अवधारणाओं के प्रति नरेन विश्वस्त नहीं था । अनेक प्रश्न उसे दिन रात बेचैन करते और उनका उत्तर पाने हेतु वह अनेक धर्माचार्यों, विद्वानों से चर्चा करता लेकिन सन्तुष्टि नही मिलती । वह रवीन्द्रनाथ टैगोर जी से भी मिला । एक बार वह हिन्दू धर्म के प्रसिद्ध संत स्वामी रामकृष्ण परमहंस के पास पहुँचे । स्वामी रामकृष्ण उन दिनो कलकत्ता के पास दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर में निवास करते थे । उनका जीवन ध्यान, चिन्तन, आराधना और प्रार्थना में ही व्यतीत होता था । नरेन्द्र नाथ ने स्वामी रामकृष्ण से पूछा क्या आपने ईश्वर को देखा है ? स्वामी जी ने कहा हाँ । स्वामी जी ने नरेन के सिर पर हाथ रखा नरेन को बिजली के करंट की तरह एक झटका सा अनुभव हुआ । उसे लगा कि उसके इर्द गिर्द की सभी वस्तुएं घूमने लगी हैं। वह कुछ घबरा सा गया । रामकृष्ण यह सब देखकर मन्द-2 मुस्करा रहे थे ।

नरेन ने उनसे पूछा यह सब क्या था ? रामकृष्ण परमहंस ने कहा घबराओ नहीं धीरे-2 सब ठीक हो जाएगा । यह आपके अन्दर दिव्य शक्ति का प्रभाव है जो धीरे-2 जागृत हो रही है । यही ईश्वरत्व का आभास है ।

दो तीन बार राम कृष्ण जी से मिलने के बाद नरेन को सचमुच अलौकिक अनुभव हुआ । रामकृष्ण जी के प्रति उसका सम्मान और अधिक बढ़ गया । वह अभी और बहुत कुछ जानना चाहता था । रामकृष्ण जी को भी दृढ़ विश्वास हो गया कि निश्चित रूप से नरेन एक दिन महान व्यक्ति सिद्ध होगा । नरेन अनेक बार अपनी पढ़ाई से समय निकाल कर दक्षिणेश्वर जाते और स्वामी जी से घण्टो विचार विमर्श करते । स्वामी जी उन्हे समाधि-ध्यान और अध्यात्म के कई गूढ़ रहस्य बताए । स्वामी जी नरेन की स्पष्टवादिता से बहुत प्रसन्न थे । एक बार स्वामी जी ने कहा नरेन अगर तुझे मेरी बातों पर विश्वास नही है तो फिर यहाँ क्यों आते हो? नरेन ने कहा स्वामी जी मैं आपको प्यार करता हूँ । इसका अर्थ यह नहीं कि मैं आपकी हर बात बिना विचार किए ही मान लूं। स्वामी जी बहुत

प्रसन्न हुए । इसी बीच नरेन पर एक संकट आ गया । नरेन के पिता श्री विश्वनाथ जी का स्वर्गवास हो गया । धन अर्जन का साधन न होने के कारण परिवार के पास भोजन की व्यवस्था न थी । नरेन और उसके परिवार की चिंताए बढ़ गई । कुछ और कारणों से भी उनके घर की हालत नाजुक हो गई । कई बार तो भूखे रहने की नौबत भी आ गई ।

नरेन काफी उदास रहने लगे थे। वे दक्षिणेश्वर आकर रहने लगे । वहाँ काशीपुर में उन्होने एक मकान किराये पर लिया । कभी–2 घरेलू कार्यो से कलकता जाते थे । इधर रामकृष्ण जी के गले में कुछ तकलीफ हुई । बाद में पता चला कैंसर है । नरेन अन्य शिष्यों की तरह उनकी सेवा में जुट गए । प्रायः समाधि में लीन रहने लगे । नरेन को कई अद्भुत अनुभव हुए । वह ईश्वर को पाना चाहते थे । एक दिन समाधि में लीन होकर अपनी सुध बुध खो बैठे । अपने शरीर की भी सुध न रही । वह एक अलौकिक शक्ति का प्रथम आभास था । उन्हे लगा कि सचमुच एक दिव्य शक्ति उनके अन्दर विद्यमान है । स्वामी रामकृष्ण ने उन्हे भविष्य के लिए तैयार करना शुरू कर दिया था । एक दिन अन्य शिष्यों की तरह नरेन को स्वामी जी ने घर–घर जा कर भिक्षा लाने को कहा । नरेन को भिक्षा में भोजन के रूप में जो कुछ मिला वह सब स्वामी जी के आगे रख दिया । स्वामी जी ने बहुत ही आनन्द से इस भोजन को ग्रहण किया और कहा कि यह अत्यन्त शुद्ध भोजन था । इसके बाद उन्होंने कुछ शिष्यों सहित नरेन को भगवें वस्त्र प्रदान किए और उन्हे सन्यासी बना दिया । कुछ दिन बाद स्वामी रामकृष्ण जी ने 16 अगस्त 1886 को शरीर त्याग दिया । कुछ शिष्य अपने अपने घरों को लौट गये । लेकिन नरेन ने कुछ शिष्यों को संगठित करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया उन्होने एक पुराना सा मकान घर किराए पर लिया और वह रामकृष्ण जी के नाम पर एक मठ की स्थापना की । यह मठ बराहनगर में स्थित था । 1888 में नरेन ने भारत भ्रमण आरम्भ किया कुछ युवाओं को प्रेरित किया । उत्तरी भारत में भी लोगो को अपने विचारों और अनुभवों से अवगत कराया । हाथरस के स्टेशन मास्टर श्री शरत चन्द्र उनके शिष्य बन गए और उन्होने अपना नाम स्वामी सदानन्द रख लिया । 1890 में नरेन ने बराहमठ त्याग दिया और निरन्तर भारत भ्रमण किया । बनारस आदि कई स्थानों पर रहने के बाद वे हिमालय की ओर चले गए । उन्हे कई दिनों तक भूखे–प्यासे भी रहना पडा । घूमते–2 वे माऊंट आबू भी पहुँचे। वहां उन्हे खेतडी के महाराजा से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ । महाराजा उनके श्रद्धालु बन गए । तत्पश्चात् नरेन बम्बई से होते हुए मैसूर पहुँच गए । मैसूर के महाराजा ने स्वामी जी की बहुत सहायता की । वह उनके विचारो से बहुत प्रभावित हुआ । उन्होने नरेन के अनेक प्रवचन रिकार्ड किए और कई वर्षो तक सुनते रहें। अब तक लोग उन्हे स्वामी जी कहने लगे थे । स्वामी जी मैसूर से चलकर रामेश्वरम पहुँचे । मदुरई में रुके और रामनंद के राजा से मुलाकात की । स्वामी जी ने भारत के उत्थान के विषय में बहुत सी चर्चाएं की । राजा ने उन्हे हर सम्भव सहायता करने का आश्वासन दिया। बाद में स्वामी जी कन्याकुमारी

पहुँचे। वहाँ समुद्र में स्थित पादुका शिला तक तैर कर पहुँचे । उनके पास नौका पर सवार होने के लिए पैसे नहीं थे । वहां 25 से 27 दिसम्बर 1892 तक समाधि स्थित राष्ट्र चिन्तन किया । भारत भ्रमण के दौरान देखे गए भारत के निर्धन, बेबस, निरक्षर लोगो के उद्धार हेतु चिन्तन करते हुए उन्हे रामकृष्ण परमहँस द्वारा अमेरिका में विश्वधर्म संसद में जाने का प्रस्ताव स्मरण हो आया । उन्हे लगा यही अवसर है कि वह भारत की गरिमा–संस्कृति की महानता और अध्यात्म की गहराई को पूरे विश्व के सामने रख सकते है । लेकिन धन के अभाव ने उन्हे एक बार पुनर्विचार हेतु विवश किया। स्वामी जी के दृढ़ संकल्प और प्रबल इच्छा शक्ति के समक्ष यह विवशता अधिक देर नहीं ठहर सकी। उन्होंने अपने शिष्यों, साथियों और अनुयायियों से धन संग्रह करने का प्रस्ताव रखा । सभी एकाएक धन संग्रह करने में जुट गए । स्वामी जी ने इसे रामकृष्ण परमहंस की इच्छापूर्ति हेतु अपना कर्त्तव्य मानकर जी जान लगा दी । कन्याकुमारी की चट्टान पर बैठकर चिन्तन करते हुए भारत के उद्धार हेतु लिया गया उनका यह निर्णय साकारत्मक सिद्ध हुआ । इसी समय खेतड़ी के महाराजा ने उन्हे अपनी रियासत में बुलाया । स्वामी जी ने यही प्रस्ताव राजा के समक्ष रखा । राजा ने स्वामी जी के अमेरिका जाने की सारी व्यवस्था की जिम्मेदारी लेते हुए समुद्री जहाज की टिकट और सफर के लिए खर्च की व्यवस्था करके उन्हे 'विवेकानन्द' नाम से सम्बोधित किया । स्वामी जी उसी दिन से विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए ।

I am proud to belong to a religion which has taught the world both tolerance and universal acceptance. We believe not only in the universal toleration, but we accept all religions are true.

Have faith that you are all, my brave lads, born to, to do great things. Let not, not the works of puppies frighten you, no, not even the thunderbolts of heaven, but stand up and work.

Strength is life, weakness is death, strength is felicity life eternal, immortal; Weakness is constant strain and misery. Weakness is death. Let positive, strong, helpful thoughts enter into your brains from very childhood.

Swami Vivekanand

शिकागो प्रस्थान

31 मई 1893 को स्वामी जी ने बम्बई से समुद्री रास्ते अपनी यात्रा आरम्भ की। उनका जहाज सिंगापुर, हाँगकांग, चींन और जापान होते हुए बैकुंवर पहुंचा । तत्पश्चात् रेलगाडी द्वारा वह शिकागो के लिए चल पडे । यात्रा के दौरान एक अमेरीकन मिस सान बोर्न नामक स्त्री से मुलाकात हुई । स्वामी जी के व्यक्तित्व और विचारों से वह बहुत ही प्रभावित हुई । उसने स्वामी जी को अपने बोस्टन के निकट निवास पर निमन्त्रण देते हुए विदा ली । शिकागो पहुँच कर स्वामी जी को विदित हुआ कि धर्म संसद सितम्बर 1893 को आयोजित की जाएगी । दूसरी समस्या यह थी कि स्वामी जी किसी धर्म या सम्प्रदाय के प्रतिनिधि के रूप में नही गए थे । इसके बिना उन्हे विश्व धर्म संसद में भाग लेने की अनुमति नही दी जा सकती थी। तीसरे धर्म संसद में भाग लेने हेतु प्रवेश–पत्र दाखिल करने की तिथि भी निकल चुकी थी । स्वामी जी को शिकागो के प्रसिद्ध स्थल और वैज्ञानिक प्रगति देखकर लगा कि वे किसी दूसरी दुनियां में आ गए हैं। शिकागो मंहगा शहर था । स्वामी जी के पास पैसे भी कम थे। बोस्टन सस्ता शहर था । स्वामी जी मिस सानबर्न के आमन्त्रण का सम्मान करते हुए उसके घर बोस्टन पहुँचे । वहाँ उनकी मुलाकात हारवर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफैसर जे.एच. राइट से हुई । प्रोफैसर साहिब से अनेक विषयों पर चर्चा के बाद स्वामी जी ने अपनी समस्याओं से उन्हे अवगत कराया । प्रोफैसर जे.एच.राइट ने स्वामी जी के लिए विश्व धर्म संसद में प्रतिनिधि के रुप में भाग लेने के लिए सारी व्यवस्था कर दी । उन्होने एक पत्र संसद के अध्यक्ष के नाम लिखा कि ''इस व्यक्ति के पास अमेरिका के सभी विद्वानों से अधिक ज्ञान का भण्डार है ।'' यह पत्र लेकर स्वामी जी शिकागो पहुँचे । शिकागो पहुंच कर स्वामी जी को पता चला कि उनसे धर्म संसद कमेटी का पता खो गया है । स्वामी जी चलते–2 थक गए थे । उन्होने लकडी के एक बकसे में अपनी रात बिताई और सब कुछ ईश्वर की इच्छा पर छोड दिया । अगले दिन प्रातः वे दो तीन घरों में भिक्षा हेतु निकल पडे । वहां उन्हे अपमानित होना पड़ा । स्वामी जी सडक के किनारे बैठ गये । अचानक एक घर का द्वार खुला । श्रीमती जार्ज डब्लयू हेल नामक महिला ने स्वामी जी से पूछा क्या आप धर्म संसद में भाग लेने आए है । स्वामी जी ने कहा हाँ । वह उन्हे अपने घर ले गई और अपने पति से मिलवाया स्वामी जी के विचारों से वह बहुत प्रभावित हुआ । वह स्त्री उन्हे विश्वधर्म संसद के कार्यालय तक ले गई ।

शिकागो के कोलम्बस नामक विशाल भवन में 11 सितम्बर 1893 को विश्व धर्म संसद आरम्भ हुआ । स्वामी जी भी अन्य धर्म संसद प्रतिनिधियों के साथ मंच पर सुशोभित थे । हजारों श्रोता वहां उपस्थित थे । इतनी श्रोताओं की संख्या देखकर स्वामी जी कुछ हैरान और परेशान भी हुए । स्वामी जी को कई बार बोलने के लिए निवेदन किया लेकिन स्वामी जी को साहस जुटाने के लिए समय चाहिए था । अन्ततः उनका नाम मंच से घोषित हुआ । स्वामी जी ने अपना सम्बोधन – अमेरिका के मेरे भाइयो और बहनों ! कहकर प्रारम्भ किया ।

सारा वातावरण दो मिन्ट तक करतल ध्वनि से गूंजता रहा । जब खामोशी हुई तो स्वामी जी ने अपना भाषण दुबारा शुरु किया । स्वामी जी ने सभी धर्मों की प्रशंसा की । जब कि दूसरे वक्ता दूसरे धर्मों की आलोचना कर केवल अपने धर्म को श्रेष्ठ बताते थे । प्रतिदिन स्वामी जी का भाषण सुनने हेतु लोग उत्सुक रहते थे । इसीलिए स्वामी जी का भाषण सबसे अन्त में रखा जाता ताकि लोग अन्त तक बैठे रहें । स्वामी जी ने हिन्दू धर्म--संस्कृति--अध्यात्म और परमात्मा के विषय में अपने व्याख्यान दिए । लोगो ने उनके विचार बहुत ध्यान से सुने। अमेरिका के अखबारों सडको पर स्वामी जी के बडे--बडे चित्र छपे थे । विवेकानन्द ने इसे अपनी विजय के रुप में स्वीकार कर ईश्वर का धन्यवाद किया । स्वामी जी वहां रहते हुए भी भारत के निर्धन लोगो को निरन्तर ध्यान में रखते थे । ये वहां सभी सुविधाओं के रहते भी सादा जीवन व्यतीत करते थे । स्वामी जी के अनेक शिष्य बन गए । स्वामी जी उन्हे नित्य नए विषय पर भाषण देते । अमेरिका में अपने शिष्यों की सहायता से उन्होने वेदान्त सोसाइटी की स्थापना की । अमेरिका में रहते हुए उन्होने हिन्दू धर्म और अध्यात्म का प्रचार प्रसार किया तथा उनके भाषणों को अमेरिका के शिष्यों ने संकलित कर प्रकाशित किया । उनके 'इन्सपायरड टाकस' बहुत प्रसिद्ध हुई । बाद में ज्ञानयोग, राजयोग, कर्मयोग तीन पुस्तके बहुत ही लोकप्रिय हुई । धर्म गुरु के रुप में भारत में भी स्वामी जी को बहुत सम्मान मिला । 1896 में वे दोबारा इंग्लैड गए । वहां वे अपने गुरुभाई स्वामी शारदानन्द से मिले । प्रोफैसर मैक्समूलर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक थे । उन्होने स्वामी रामकृष्ण जी पर एक पुस्तक भी लिखी थी । वहां भी स्वामी जी के अनेक शिष्य बन गए । मिस मार्ग्रेट नोबल जो बाद में सिस्टर निवेदिता बनी उन्होने पूरा जीवन स्वामी जी के चरणों में लगा दिया । बाद में आप जर्मनी गए और वहां संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान प्रोफैसर पाल डीसन से मिले ।

स्वामी जी की भारत वापसी पर जनसमुदाय में खुशी की लहर दौड गई। विश्व धर्म संसद में हिन्दू धर्म और अध्यात्म की विजय पताका फहराने के कारण लोग उन्हे जान चुके थे । अब वे एक महानायक बन चुके थे । 15 जनवरी 1897 को उनका समुद्री जहाज कोलम्बो पहुँचा । स्वामी जी ने भारत की धरती को प्रणाम किया । लोग उनके चरण छूने के लिए उतावले हो रहे थे । लोग पुष्प--वर्षा कर रहे थे । कुछ दिन कोलम्बो रुकने के बाद वे मद्रास चले गए । मद्रास से रामेश्वर, रामनन्द, मदुरै आदि स्थानों पर पहुँचे । सभी जगह उनका भव्य स्वागत हुआ । बाद में आप कलकत्ता आ गए वहां अपने साथियों के साथ कुछ दिन बिताए। आराम करके कुछ दिन बाद दक्षिणेश्वर चले गए । वहाँ स्वामी राम कृष्ण परमहंस जी का धन्यवाद किया और उनके साथ बिताए पुराने दिनो को याद किया तथा उनकी जयन्ती धूमधाम से मनाई । मई 1897 को उन्होने प्रसिद्ध सन्यासियों की एक सभा बुलाई और भारत के नवनिर्माण की बात कही । सभी शिष्य उनके विचारों से प्रभावित हुए । स्वामी जी ने देश के नौजवानो को प्रेरणा, उत्साह और शक्ति प्रदान कर देश सेवा हेतु तैयार किया ।

अधिक भागदौड़ के कारण स्वामी जी की सेहत बिगडने लगी थी। उन्हे आराम की जरूरत थी । वे बैलूरमठ में आ गए । वहां भी वे अपने शिष्यों के साथ अध्यात्म के बारे में चर्चा करते रहते थे । वहां उन्होने अनेक पशु–पक्षी पाल रखे थे । स्वामी जी के अन्तिम दिन बैलूर मठ में ही बीते । उन्होने अपने शिष्यो को बता दिया था कि अब वे ज्यादा दिन तक इस दुनिया में नहीं रहेंगे । एक दिन मठ के मैदान मे वे स्वामी प्रेमानन्द जी के साथ घूम रहे थे । कहा कि जब मैं शरीर त्याग दूँ तो इस स्थान पर मेरा संस्कार कर देना । आज उसी स्थान पर विवेकानन्द जी का मन्दिर स्थित है ।

4 जुलाई 1902 का दिन था । वे अपनी कुटिया मे प्रातः समाधि स्थित हो कर बैठ गए । देवी मां की स्तुति करते करते एक भजन गाने लगे । फिर कुछ देर बाद बाहर आ कर घूमने लगे । तत्पश्चात् उन्होने अपने साथियों के साथ सामान्य रूप से भोजन किया । दोपहर के बाद सन्यासियों की संस्कृत विषय की कक्षा पढाई । इसके बाद स्वामी प्रेमानन्द जी के साथ सैर पर निकल गए रास्ते में उन्होने मठ में वैदिक कालेज शुरू करने की चर्चा की । सन्ध्या वन्दन के पश्चात् वे लेट गए । एक शिष्य उन्हे पंखा करने लगा । शिष्य ने देखा स्वामी जी लम्बे–2 सांस ले रहे है उसने एक अन्य शिष्य को बुलाया । उसने देखा स्वामी जी की नब्ज नहीं चल रही थी । स्वामी जी ने आजीवन संघर्ष किया । अन्ततः उन्हे माँ काली ने अपनी गोद में सुला दिया । दूसरों को जगाने वाला आज स्वयं सदा की नींद सो गया था । नवनिर्माण की नई प्रभात में पुनः जगने के लिए । आज प्रत्येक भारतीय युवा के अन्दर दिव्य शक्ति के रूप में स्वामी जी की प्रेरणा है । आज उनकी 150 वीं जन्मशती के पुण्य अवसर पर पूरा भारत ही नहीं अपितु विश्व उन्हे नमन कर रहा है। विश्व के कोने–2 में उनके जीवन–दर्शन पर अनेक अनुभवों और अमूल्य विचारों से अनुप्राणित हो कर युवाशक्ति अपने भविष्य का मार्ग प्रशस्त कर रही है । स्वामी जी ने भारतमाता के लाखों सपूतो को निर्धनता से मुक्ति दिलाई । दलितों को समाज में सम्मान से जीना सिखाया । स्वतन्त्रता और उन्नत भारत का मानचित्र तैयार किया । अब हमारा दायित्व है कि हम इस मानचित्र में रंग भरें और उनके आदर्शों पर चलने का दृढ संकल्प ले । यही उनके 150वीं वर्षगांठ मनाने की सार्थकता है ।

Weakness is the one cause of suffering. We become miserable, because we are weak. We lie, steal, kill and commit other crimes, because we are weak. We die because we are weak. Where there is nothing to weaken us, there is death, no death, no sorrow.

Swami Vivekanand

महान व्यक्तित्व

इतिहास इस बात का साक्षी है कि 'नरेन' (नरेन्द्र नाथ दत) स्वामी विवेकानन्द का आविर्भाव उस समय हुआ जब भारत ऐतिहासिक दृष्टि से संक्रातिकाल से गुजर रहा था । अंग्रेजी शासन के अत्याचारों और अन्यायों की सीमा का अतिक्रमण हो चुका था । भारतीय संघर्षरत थे अपनी भारत माता की पराधीनता की बेडियों को काटने के लिए । हरेक भारतीय बलिदान देने को तत्पर था । स्वामी रामकृष्ण कृष्ण परमहंस की प्रेरणा से नरेन्द्रनाथ (स्वामी विवेकानन्द) ने भारत माता के वीर सपूत के रूप में भारत–माता को बन्धन मुक्त करने हेतु लोगो में अन्तश्चेतना जगाने का कार्य आरम्भ किया । शिकागो के विश्वधर्म संसद में अपने वक्तव्यो से विवेकानन्द ने विश्व को बता दिया कि भारत की शक्ति क्या है ? भारत लौटकर उन्होने समस्त भारत का भ्रमण किया और लोगो को अपने अतीत और अस्तित्व पर गर्व करने की प्रार्थना की। स्वामी जी का प्रथम उद्देश्य संगठित राष्ट्र की स्थापना करना था । वे भारतीय संस्कृति और अध्यात्म को विश्व पटल पर देखना चाहते थे । राष्ट्र भाव द्वारा वे भारतीयों को पुनर्निर्माण के मार्ग पर अग्रसर करना चाहते थे । उन्होने बार--बार अपने इस संकल्प को दोहराया और कहा "पुननिर्माण तथा पुनर्सृजन के लिए बिखरी हुई शक्तियों को एक निश्चित लक्ष्य की उपलब्धि के लिए एकत्रित करने का समय आ चुका है।" उतिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान्ति बोधत– उठो–जागो–और अपने लक्ष्य की प्राप्ति तक रुको नहीं के उनके सन्देश ने लाखों नवयुवको को भारतमाता के स्वतन्त्रता–संग्राम में कूदने के लिए बाध्य किया । उन्होने नवयुवकों को सम्बोधित करते हुए कहा– "हमारी पवित्र मातृभूमि ही धर्म और दर्शन का देश है । धर्मवीरों का जन्म स्थान तथा त्याग क्षेत्र है । नवयुवको को वीरता, बलिदान और निडरता की शिक्षा प्रदान कर स्वामी जी ने उन्हे अपने अन्दर विद्यमान असीम दिव्य शक्ति का आभास करवा कर निद्रा में आमग्न होने की अपेक्षा आशा के उदित सूर्य की प्रतीक्षा करने हेतु प्रेरित किया ।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी की जन्म शताब्दी के समय महात्मा गान्धी ने जनसमुदाय को सम्बोधित करते हुए कहा था कि विवेकानन्द की पुस्तकों के अध्ययन से देश भक्ति को बढावा मिला है । इसी प्रकार लाला लाजपतराय ने राष्ट्रीय सहिष्णुता की एक नवीन भावना पैदा करने का श्रेय विवेकानन्द को ही दिया था । देशभक्त सुभाष चन्द्रबोस भी स्वामी जी के विचारों से अछूते न रह सके । उनके अनुसार स्वामी जी का धर्म राष्ट्रीयता को उत्तेजना देने वाला धर्म था। राष्ट्रीय एकता का मार्ग आध्यात्मिक विकास द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है ।

क्रान्तिकारी योद्धा के रूप में स्वामी विवेकानन्द का जीवन दर्शन आमूल चूल परिवर्तन की ओर संकेत करता है । परम्परावादी, दुर्बल नकारात्मक विचारों को तिलाञ्जलि देना ही श्रेयस्कर है । वे कथनी में नहीं करनी में विश्वास करते थे । उनके अनुसार हमारे सिद्धान्त कितने ही गौरवपूर्ण क्यों न हो हमारा शास्त्र

कितने हीं सुन्दर सूत्रों से क्यों न बँधा हो; हम उसे तब तक धर्म नही कह सकते जब तक कि वह पुस्तकों एवं निर्धारित सिद्धान्तों तक हीं सीमित है ।''
आध्यात्मिक शक्तियों को जाग्रत करने हेतु आपको नए धर्म या सम्प्रदाय की आवश्यकता नहीं है । प्राचीन ग्रन्थों की उचित व्याख्या ही आपका मार्गदर्शन कर सकती है । हिन्दू धर्म एक समृद्ध और परिनिष्ठित जीवन की व्याख्या करने वाला श्रेष्ठ धर्म है । यही विश्वास उन्हे विश्व धर्म संसद में जाने के लिए प्रेरित कर रहा था । वे अपनी सांस्कृतिक विरासत व आध्यात्मिक निष्ठा को पूरे विश्व तक ले जाना चाहते थे । उन्होने मनुष्य को पशुता से ऊपर उठा कर आध्यात्मिक अनुभूति के पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया ।

स्वामी विवेकानन्द ने जिस धर्म की बात की थी वह विश्व के धरातल पर वसुधैव कुटुम्बकम् की भावनाओं से ओत–प्रोत था । विज्ञान– अध्यात्म और मानवता के सुमेल से बना विश्वधर्म मानव संस्कृति के उत्थान हेतु उपयुक्त मानवधर्म था । उनका मानवधर्म विकृत–दार्शनिक सिद्धान्तों का पुलन्दा मात्र नहीं था । उनके अनुसार ''आत्मरक्षा और देश रक्षा से बढकर कोई धर्म नहीं है । दुर्बलों की रक्षा पुण्य है दुर्बल पर अत्याचार पाप है । उनका जीवन दर्शन धर्म की व्याख्या का जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत करता है । ''धर्म मनुष्य के भीतर निहित देवत्व का विकास है धर्म न तो पुस्तकों में है, न धार्मिक सिद्धान्तों और न हीं तर्कों में । वह तो केवल अनुभूति में हीं निवास करता है ।'' स्वामी जी वास्तव में एक शिक्षक के रूप में मानव–समुदाय को शिक्षित करना चाहते थे । उन्होने भारत भ्रमण कर भारत रुपी ग्रन्थ का सूक्ष्म विवेकी अध्ययन किया था । वे हिंन्दू धर्म की वैज्ञानिक विचारधारा तथा वेदान्त के सिद्धान्तों का समन्वय प्रस्तुत कर मानव समाज को एक नई दिशा प्रदान करना चाहते थे जिससे सार्वभौमिक मानव समाज की कल्पना साकार हो सके ।

दीन–हीन–निर्धन और समाज के पिछड़े लोगो के प्रति स्वामी जी विशेष स्नेह रखते थे । स्वामी जी मानते थे कि भारत की उन्नति के लिए एक मात्र सहारा यह निम्नवर्ग ही है । इनकी उपेक्षा करना घोर पाप है । दुःख की बात है कि हम उनकी चिन्ता नहीं करते । जो अपने देश के लिए अन्न उगाते हैं हम उन गरीबों के प्रति चिंता क्यों नहीं करते । स्वामी जी का कथन था कि राष्ट्र झोपडियों में निवास करता है। उन्होने निम्न वर्गो का शोषण करने वालों को चेतावनी देते हुए कहा था निम्न वर्ग का उत्थान होते हीं वे पूंजीपतियों के शिकजे से मुक्त होकर नवभारत का निर्माण करेंगे ।

स्वामी जी मानवीय समाज के उत्थान हेतु उसे दोष मुक्त करना चाहते थे । समाज सुधारक के रूप में उन्होने नारी के विधवा स्वरूप के उत्थान हेतु कहा था । भारतीय स्त्रियां स्वयं अपनी समस्याएं हल करने में समर्थ है तुम व्यर्थ ही अपना मस्तिष्क खपाते हो । उन्होने समाज में परिव्याप्त छूआछूत मिटाने पर बल दिया । वे शूद्र और ब्राह्मण दोनो में ही ईश्वर का स्वरूप देखते थे । वे मानव में घृणा नहीं प्रेम देखना चाहते थे । दि मास्टर एज आई सा हिम' में भगिनी निवेदिता

लिखती है।''वह समाज में पूर्ण परिवर्तन चाहते थे । वे एक ऐसे समाज के पक्ष में थे जो सभी को सम्पूर्ण आजादी प्रदान करे ।

समाज के अभिन्न अंग के रूप में नारी के प्रति वे विशेष सम्मान रखते थे। उनके अनुसार नारियां तो महाकाली की साकार प्रतिमाए है । जो जाति नारी का सम्मान नही करती वह न तो अतीत में उन्नति कर सकी है न भविष्य में कर सकेगी । एक पंख से पक्षी नही उड सकता । महिलाओं की उन्नति होने से ही भारत पुनः जाग उठेगा । उन्होने नारी को शिक्षित करने पर बहुत जोर दिया । स्वामी विवेकानन्द भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक थे । उन्होंने समय--समय पर जनसाधारण को संस्कृत भाषा के अध्ययन के लिए भी प्रेरित किया । उनके अनुसार भारतीय संस्कृति की वास्तविकता इन्ही संस्कृत के ग्रन्थों में विद्यमान है । भारत के जनसमुदाय में एकता का बोध मात्र संस्कृत भाषा के शिक्षण से ही हो सकता है । उनका विश्वास था कि संस्कृत शब्दों के उच्चारण मात्र से ही भारतीय जाति में शक्ति और गौरव का भाव जागेगा । हमारे ग्रन्थ अधिकाँशत संस्कृत भाषा में हैं । धर्म को समझना है तो संस्कृत के ग्रन्थों का अध्ययन ही हमारा मार्ग प्रशस्त कर सकता है । उनके अनुसार धर्म भारत की आत्मा है । धर्म हमारे जातीय जीवन का मेरुदण्ड है । यदि यह धर्म नष्ट हो गया तो भारत की एक राष्ट्र के रूप में मृत्यु अवश्यम्भावी है ।

स्वामी जी मानवता के प्रति समर्पित भाव से एक सच्चे सेवक के रूप में अवतरित हुए । निर्धन और दलित वर्ग के लोगों के प्रति सहानुभूति ही उनका सबसे बडा क्रान्तिकारी हथियार था । घर--घर जाकर उन्होने उन लोगो की दरिद्रता दूर करने और आत्मोत्थान का मार्ग तलाशने में वर्षों लगा दिए । अपने भ्रमण काल के दौरान प्राप्त अनुभव ने उन्हे विश्व के सम्मुख एक संगठनकर्ता के रूप में प्रस्तुत करने की भूमिका अदा की । भारतीय संस्कृति के उपासक स्वामी जी ने पाश्चात्य देशों में जाकर भारत के प्रति विश्व का दृष्टिकोण बदला । भारत की गुणवता से अवगत कराया । भारत की गरिमा को विश्व पटल पर सम्प्रेषित किया । स्वामी जी के पास शिकागों जाने का लक्ष्य था भारतीय संस्कृति और धर्म की आधुनिक परिभाषा से विश्व को अवगत कराना । वे हिन्दू धर्म का साकारात्मक पक्ष प्रस्तुत करना चाहते थे ।

स्वामी जी ने अपने गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस के निधन के बाद स्वयं को भारत के निम्न वर्ग की सेवा में लगा दिया । वे अपने साथियों और शिष्यों से भी यही अपेक्षा रखते थे । उस सन्यासी का पूरा जीवन--भूखे एवं पीडित लोगो का कार्य क्षेत्र रहा । उन्होंने अपने सहयोगियों से कहा । यदि कुशल चाहते हो तो साक्षात् नर नारायण मानव देहधारी हर प्रकार के मनुष्यों की पूजा करे । यदि तुम ईश्वर को पाना चाहते हो तो मनुष्य की सेवा करना सीखो । उनके अनुसार जब पडोसी भूखा मरता है तो मन्दिर में भोग चढाना पुण्य नहीं पाप है । उन्होंने कहा भगवान को कहां खोजते फिरते हो ? दरिद्र--दुखी, दुर्बल, घृणित--अस्पृश्य क्या देवता नहीं है ? पहले उनकी पूजा क्यों नहीं करते ? महात्मा गांधी का अस्पृश्यता आन्दोलन भी स्वामी जी के मतछूओवाद की क्रान्ति से ही प्रेरित था ।

स्वामी जी यह मानते थे कि ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी को इस संसार में किसी विशेष उद्देश्य से भेजा है । कोई भी प्राणी उस दिव्य शक्ति ये वंचित नहीं है । लेकिन विडम्बना यह है कि जीव उस अन्तश्चेतना रूपी शक्ति को पहचानने की भूल करता है। अपने अन्तर में आत्मविश्वास नहीं जगा पाता । स्वार्थ हमें पीछे धकेल देता है । हम दूसरों के प्रति दायित्व ये आंखे मूंद लेते है । युवा शक्ति अपनी उर्जा संरचनात्मक कार्यों में लगाए । अध्यात्म की ओर प्रवृत होना ही आत्म परिचय की और उन्मुख होना है। उनके अनुसार नास्तिक वह नही जो ईश्वर को नही मानता अपितु नास्तिक वह है जिसमे आत्मविश्वास नही है । उन्होने अन्धविश्वास को इसमे सबसे बडी बाधा माना है। इसे विजय करने के लिए दृढ इच्छा शक्ति को जगाओ । जो आपके अन्दर है । ''आपके अन्दर विद्यमान अनन्त दिव्य शक्ति ही धर्म है अनन्तशक्ति ही परमात्मा है । धर्म चाहे कुछ भी हो लेकिन निराशा बिल्कुल नहीं है ।''

शिक्षा के संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द जी ने बहुत स्पष्ट शब्दो में कहा कि शिक्षा कोई बाहर से दिमाग में डालने वाली वस्तु नहीं है । शिक्षा मनुष्य का चरित्र निर्माण करने वाली आन्तरिक क्षमता है । इसी क्षमता का प्रकटीकरण जो पूर्णता की ओर ले जाता है शिक्षा है । पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा अपनी क्षमता का अनुभव मनुष्य को अधिक विद्वान और शिक्षित बनाता है । यही ज्ञान की पराकाष्ठा है । विचारों की पवित्रता मनुष्य को महामानव बनाती है । शिक्षा का उद्देश्य है पशुता से मानवता की ओर ले जाना । अन्दर की विद्यमान शक्तियों को जाग्रत कर मार्ग दर्शन कर उन्नति का मार्ग प्रशस्त करना । उनके अनुसार धन–यश–नाम नही अपितु आपका चरित्र आपको कठिनाइयों से संघर्ष करने की सामर्थ्य प्रदान करता है । कठिनाई का सामना आत्मविश्वास और दृढ इच्छा शक्ति के बिना सम्भव नहीं है । यह सब आपके अन्दर विद्यमान है –स्वयं को पहचानों ।

स्वामी जी का विश्वास था कि अच्छे काम का विरोध होना उसकी सफलता का संकेत है । विरोध से बल मिलता है । सफलता पाने का ज़ज़बा प्रबल होता है । महान कार्य या उद्देश्य के लिए मनुष्य को अधिक विरोधो और कठिनाईयों का सामना करना पड़ सकता है । अतीत की घटनाओ से सबक अवश्य सीखो । अतीत की असफलता को स्मरण नहीं करो, पश्चाताप भी मत करो । यह आपको कमजोर कर देगा । निराशा ही ओर ले जायेगा । याद रखो–गलती दोहराई न जाए ।

निष्कर्षत : स्वामी जी का जीवन पूरे विश्व के लिए एक प्रकाशस्तम्भ के समान है । उन्होने मानव समाज के उत्थान हेतु अपने अनुभवों की मशाल से देश की उन्नति का पथ–पदर्शन किया । शिक्षा–साहित्य, संस्कृति, धर्म–दर्शन–समाज–राष्ट्र– युवा शक्ति–अध्यात्म वेदान्त और हिन्दू धर्म आदि अनेक विषयों पर उन्होने अपने व्याख्यान दिए । उनकी वाणी में ओज था और मुख पर तेज । ज्ञान और शक्ति में सामंजस्य पैदाकर उन्होने युवाओं का आह्वान् किया ।

भारत भ्रमणकर भारत को जानने का सफल प्रयोग किया । मानव सेवा का संकल्प लेकर दलित और निर्धन लोगों को दरिद्र–नारायण की उपाधि से विभूषित कर उनके उद्धार हेतु जन–2 में चेतना उत्पन्न की । उनके उद्धार से ही देश का उद्धार होगा और भारत विश्व की बडी शक्ति बन सकेगा । मानवता के लिए युवा शक्ति को आगे आना होगा । अध्यात्म–वेदान्त–धर्म कर्म सबको स्वामी जी ने मानव के उत्थान हेतु विभिन्न मार्ग बताया । उन्होने अपने अनुभवो को ईश्वरीय प्रेरणा मानकर भारत की उन्नति के लिए विदेशों में भी भारतीय संस्कृति का 'परचम' लहराया । भारतीयों की अन्तश्चेतना को जगाने के साथ–2 पाश्चात्य संस्कृति से भारतीय संस्कृति को श्रेष्ठ प्रमाणित किया । अपनी वाक्शक्ति और ज्ञान की उर्जा से पूरे विश्व को भारत की अध्यात्म शक्ति का लोहा मनवाने वाले स्वामी विवेकानन्द जी की 150वीं जन्म (सार्द्धशती) के पुण्य अवसर पर हम सब भारतीय अपना दायित्व समझ कर स्वामी जी के अधूरे कार्यो को सम्पन्न करने और उनके पदचिन्हो पर चलने का दृढ संकल्प ले । यही उनके जन्म सार्द्धशती समारोह की सार्थकता है । निस्सन्देह स्वामी विवेकानन्द युग प्रवर्तक महामानव थे । अस्तु ।

Stand up, bold be strong. Take the whole responsibility on your own Shoulders, and know that you are the creator of your own destiny. All the strength and succour, your want is within yourselves. Therefore make your own future.

Physical Weakness..................you will be nearer to Heaven through football then through a study of Gita. You will understand Gita better with your bicep's, your muscles, a little stronger, you will understand the mighty genius and the mighty strength of krishna better with a little of strong blood in you.

I stand for Truth. Truth will never ally itself with falsehood. Even if all the world would be against me. Truth must prevail in the end.

Swami Vivekanand

प्रेरक प्रसंग

एक बार स्वामी जी किसी पुस्तकालय में गए । वहाँ इन्साइकोपीडिया ब्रिटेनिका (विश्वकोश) की दस खण्ड (प्रतियाँ) पड़ी थी । स्वामी जी ने पुस्तकालयाध्यक्ष से कहा आप मुझे विश्वकोश के दस खण्ड पढ़ने के लिए दे दीजिए । मै एक माह के बाद लौटा दूँगा । पुस्तकालय के अध्यक्ष ने हँसते हुए कहा – बन्धु ! इसके दस खण्ड पढ़ने के लिए महीनो का नही वर्षों का समय चाहिए । स्वामी जी ने कहा चलो ठीक है । आप मुझे प्रथम दस खण्ड दे दीजिए । एक माह के बाद स्वामी जी विश्वकोश की प्रतियाँ लौटाने गए । पुस्तकालयाध्यक्ष ने कहा मैने पहले ही कहा था इसे पढने के लिए वर्षों लग जाएंगे । आपने इतनी जल्दी हार मान ली । स्वामी जी ने कहा नही ऐसी बात नही है। मैने सारे खण्ड पढ़ लिए है । आप किसी भी खण्ड में से किसी भी शब्द के बारे में मुझ से पूछ सकते है । बात विश्वास से परे थी । पुस्तकालयाध्यक्ष ने आजमाने के लिए दो चार शब्दों के बारे में पूछा तो स्वामी जी ने अक्षरशः उनका सही अर्थ बताया तो पुस्तकालय का अध्यक्ष दंग रह गया स्वामी जी ने कहा अगर मन की एकाग्रता से कोई भी कार्य किया जाए तो उस कार्य में निपुणता स्वतः सिद्ध हो जाती है ।

शिकागों में धर्म संसद में वक्तव्य देने के बाद बहुत से लोग उनसे प्रभावित हुए बिना न रह सके । उन्होने अपनी जिज्ञासा शान्त करने के लिए अनेक प्रश्न किए । स्वामी जी ने सभी के प्रश्नो का उत्तर अत्यन्त सहज भाव से दिया । हिन्दू धर्म पर चर्चा करते–2 अनेक विदेशी हिन्दू धर्म से प्रभावित हो कर हिन्दू धर्म में दीक्षित होना चाहते थे । एक प्रोफैसर ने स्वामी जी से निवेदन किया कि मैं हिन्दू धर्म में दीक्षित होना चाहता हूँ । स्वामी जी का उत्तर था । मैं यहां हिन्दू धर्म के विषय में लोगो की गलत अवधारणाओं को दूर करने आया हूँ । आप जैसे लोगो का धर्म परिवर्तन करने नही । सभी धर्म अच्छे होते हैं – आपका भी ।

एक बार स्वामी जी कहीं विदेश में हिन्दू धर्म के विषय में बोल रहे थे । उन्होने भगवान श्री कृष्ण तथा गोपियों के प्रसंग को सन्दर्भ के रूप में प्रस्तुत किया । उन्होने बताया कि कृष्ण जी की बांसुरी की धुन सुनकर सभी गोपियाँ–ग्वाले अपना–2 काम छोडकर मग्न हो कर कृष्ण जी के पीछे पीछे चलने लगते । कृष्ण जी के साथ रास लीला करते थे । कृष्ण जी भी सभी को बहुत प्रेम करते थे । भाषण के बाद उनके विदेशी अनुयायियों का एक समूह स्वामी जी के पास आया और कहने लगा स्वामी जी हम एक शंका की निवृति चाहते है । स्वामी जी ने पूछा क्या शंका है ? उन्होने कहा कि हम यह नही समझ पाए कि पूरा गोकुल कृष्ण जी के पीछे इतना दीवाना क्यों था? कृष्ण जी के पास ऐसा क्या था जो सभी लोग उनसे इतना प्रेम करते थे और उनके पीछे लगे रहते थे । स्वामी जी ने कुछ नहीं कहा बस उठ कर चल दिए । लोग साथ–2 चलने लगे । उनकी जिज्ञासा शान्त नही हो रही थी । कुछ दूर जा कर स्वामी जी ने पीछे मुड कर देखा । लोग उनके पीछे–2 आ रहे थे । स्वामी जी आगे बढते गए लोग उनके पीछे–पीछे चलते गए । स्वामी जी एक समुद्र के तट पर आकर रुक गए । लोगो ने वहाँ पहुँच कर

उन्हे चारों तरफ से घेर लिया । स्वामी जी थोडा मुस्कुराए । लोगो ने फिर कहा आपने हमारी शंका का निवारण नही किया । स्वामी जी ने कहा आप को उत्तर मिल चुका है । आप इतनी दूर तक मेरे पीछे–2 क्यों चल कर आए हो ? मैं तो एक सामान्य मानव हूँ । श्री कृष्ण तो योगेश्वर थे । भगवान थे। उनके पास मधुर संगीत वाली बाँसुरी थी । मेरे पास तो कुछ भी नहीं है । जब आप मेरे पीछे पीछे इतनी दूर तक आए हो तो गोकुलवासी अगर श्री कृष्ण की बांसुरी सुनकर उनके पास पहुँच जाते थे तो इसमे आश्चर्य ही क्या है ?

नरेन (स्वामी विवेकानन्द) के पिता श्री विश्वनाथदत्त व्यवसाय से वकील थे । उनके घर बहुत से लोगों का आना जाना लगा रहता था । उनके लिए हुक्का पानी की व्यवस्था की जाती थी । जातिवाद के कारण हर जाति के व्यक्ति के लिए अलग हुक्का होता था । नरेन को यह सब समझ नही आता था । अभी बालपन में थे । स्वामी जी के मन मे आया कि अगर एक जाति का व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का हुक्का पी लेगा तो क्या होगा ? क्या कोई विस्फोट होगा ? या भूकम्प आ जाएगा? स्वामी जी ने सभी हुक्के तैयार किए और बारी बारी सब को पीया । उन्होने देखा उन्हे कुछ भी नही हुआ । वे सही सलामत थे । उन्हे लगा कि यह भ्रामक अवधारणाएँ, जातिवाद सब मनुष्य की देन है । इसी के फल स्वरूप उन्होने 'मतछूओ' वाद आंदोलन आरम्भ किया जो राष्ट्रीय एकता के लिए वरदान सिद्ध हुआ । स्वामी विवेकानन्द घण्टो समाधि का अभ्यास करते थे ।

एक बार एक मित्र के साथ उन्होने एक वन में समाधि लगाने की इच्छा प्रकट की । मित्र को भी उन्होने समाधि लगाने के लिए कहा । थोडी देर तक दोनों ध्यान लगा कर बैठे रहे । थोडी देर बाद मच्छरों की ध्वनि और उनके काटने से परेशान उनके मित्र ने थोडी सी आँख खोल कर देखा । स्वामी जी ध्यानावस्था में मग्न निश्चेष्ट बैठे थे । उनका पूरा शरीर मच्छरों से इस प्रकार ढक गया था मानो उन्होने काला कम्बल ओढ रखा हो । उनका मित्र बहुत हैरान हुआ । स्वामी जी को ध्यान में लगा देख उन्होने पुकारना ठीक नही समझा । कुछ समय बाद जब स्वामी जी की समाधि खुली तो उनके मित्र ने कहा मुझे तो मच्छरों ने बहुत परेशान किया। स्वामी जी ने कहा पता नही मै तो समाधि में लीन था । मुझे तो किसी मच्छर ने परेशान नहीं किया । स्वामी जी ने कहा मित्र आपका ध्यान मच्छरों की ओर लगा था। अतः समाधि नही लगा पाए । मेरा ध्यान मच्छरों की ओर नही था। अतः जो भी काम करो एकाग्रचित हो कर करो ।

एक बार एक व्यक्ति ने स्वामी से जी ने व्यंग्य कसते हुए कहा – मनुष्य को सन्यास नही लेना चाहिए – यह भी कोई जीवन है । भिक्षा मिले तो खा लो नहीं तो भूखे रहो – अच्छा पहन सकते हो न अच्छा खा सकते हो । न घर न घाट–बस भटकते रहो । स्वामी जी ने उसे कुछ नही कहा । थोडी देर बाद एक व्यक्ति बहुत से पकवान लेकर स्वामी जी के समक्ष आया और कहने लगा मै आपके लिए भोजन लाया हूँ । मुझे पता है आपने भ्रमण के दौरान कई दिनों से भोजन नही किया है । स्वामी जी कहने लगे – भई मै आपको नही जानता हूँ ।

आप यह सब मेरे बारे में कैसे जानते हैं ? उस व्यक्ति ने बताया रात्रि के समय भगवान राम ने मुझे सपने में बताया कि मैं आपके लिए भोजन लेकर आऊँ । मैने सपने मे आपके भी दर्शन किए थे। इसीलिए मैने आपको पहचान लिया है । स्वामी जी ने स्नेह पूर्वक भोजन किया । उस व्यक्ति को आशीर्वाद दिया । इस घटना से व्यंग्य कसने वाला व्यक्ति बहुत ही लज्जित हुआ । वह स्वामी जी के चरणो में गिरकर क्षमा मांगने लगा । प्रत्येक जीव को ईश्वर पर विश्वास करना चाहिए ।

अधिक व्यस्तता और आराम न मिलने के कारण स्वामी जी का स्वास्थ्य बिगडने लगा था । 1898 में वे आराम करने हेतु कुछ दिनो के लिए दार्जिलिंग चले गए । इसी बीच कलकता में प्लेग फैलने का समाचार मिला । स्वामी जी कलक्ता वापिस आ गए और पुनः कार्य में जुट गए । उन्होने अपने सन्यासी साथियों सहित रोगियों की सेवा का कार्यभार सम्भाल लिया । लोग बहुत ही भयभीत थे। लोग कलकता छोड कर भाग रहे थे। स्वामी जी के द्वारा आरम्भ किए गए राहत कार्य से लोगों का मनोबल बढ़ा । एक दिन एक सन्यासी ने स्वामी जी से पूछा "इस महान कार्य के लिए धन कहां से लांएगे ? स्वामी जी का उत्तर था अगर जरूरत पडी तो हम नए मठ के लिए खरीदी जमीन को बेच देंगे । हम सन्यासी हैं । हमे वृक्षों के नीचे रहने और भिक्षा मांग कर भोजन करने के लिए तैयार रहना चाहिए ।"

स्वामी जी एक दिन काशी की एक गली से गुजर रहे थे कि एकाएक बन्दरो ने उनपर आक्रमण कर दिया । बन्दरों ने उनके कपडे भी फाड दिये और काट खाया। स्वामी जी बन्दरों से पीछा छुडाने हेतु वहां से भागने लगे । अन्दर भी उनके पीछे–2 दौडने लगे । स्वामी जी की परेशानी देखकर खिडकी से एक व्यक्ति ने स्वामी जी को कहा –स्वामी जी भागिए नहीं । तन कर खडे हो जाइए । इन्हे घूँसा तान कर दिखाएँ। उस व्यक्ति के कहने पर स्वामी जी ने ठीक वैसा ही किया । ज्यों ही स्वामी जी ने डटकर एक जगह खडे होकर बंदरों को घूँसा तानकर दिखाया तो बंदर एक एक करके शान्त होकर चले गये । स्वामी जी इस घटना को अक्सर सुनाया करते थे कि हमें संकट के समय भागना नहीं चाहिए बल्कि डट कर उनका सामना करना चाहिए ।

If a man with an ideal makes a thousand mistakes, I am sure that the man without an ideal makes fifty thousand. Therefore, it is better to have an ideal. Oh, if only you know yourselves ! You are Souls, you are Gods. If ever I feel like blaspheming, it is when I call you, man.

Swami Vivekanand

साहित्यिक सन्दर्भ

माँ सरस्वती की वरद सन्तान के रूप में अवतरित और शक्ति के उपासक स्वामी विवेकानन्द प्रतिभावान व्यक्तित्व के स्वामी थे । कभी हम नामकरण करते हुए बच्चों के गुणों के अनुरूप ही नामकरण करते हैं । नाम सार्थक हो तो भविष्य में उसका प्रभाव जीवन पर भी पडता है । यथा नाम तथा गुण के अनुसार स्वामी जी का नाम नरेन्द्रनाथ रखा गया । नर + इन्द्र अर्थात् मनुष्यों में राजा (श्रेष्ठ) । इन्द्र के समान अधिपति । लाड से लोग उन्हे नरेन कहकर पुकारते थे । कालान्तर में उनकी विवेकशीलता और उदार मनोवृति के अनुरूप उन्हे विवेकानन्द के नाम से प्रतिष्ठा मिली। विवेक + आनन्द अर्थात् जिसके पास ज्ञान (विवेक) और प्रसन्नता (आनन्द) दोनो ही हों वह अन्य मनुष्यों से सौभाग्यशाली और श्रेष्ठ तो होगा ही । वंश परम्परा और संस्कार भी उन्हे ऐसे ही मिले थे । उनके परिवार में सभी के नाम भी कितने पावन और ईश्वरीय अवधारणा को सार्थक करने वाले थे । शिक्षित और लब्धप्रतिष्ठ उनके दादा श्री दुर्गाचरण दत्त पिता श्री विश्वनाथ दत्त और माता श्रीमती भुवनेश्वरी देवी बाद में गुरु भी मिले तो श्री रामकृष्ण परमहंस – इन नामों की सार्थकता से ही स्वामी विवेकानन्द का जीवन अध्यात्म और धर्म की और प्रवृत्त हुआ ।

स्वामी जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे । घर में धार्मिक वातावरण – अच्छी शिक्षा स्वामी जी ने अनौपचारिक शिक्षा के रूप में भी बहुत से ग्रन्थों का अध्ययन किया था । वे बंगला–संस्कृत–हिन्दी–प्राकृत –अंग्रेजी आदि भाषाओं के ज्ञाता ही नही लोकप्रिय व्याख्याता भी थे । उन्होने वेदान्त–अध्यात्म–धर्म–शिक्षा आदि अनेक विषयों पर अपनी मजबूत पकड बना ली थी । वे सच्चे देश भक्त–समर्पित–समाजसेवी और भारत माता के कर्तव्य निष्ठ वीर सपूत थे । उन्होंने केवल एक प्रचारक के रूप में हिन्दू धर्म का प्रचार किया । भारतीय संस्कृति की गरिमा से विश्व को अवगत ही नही कराया अपितु अपने विचारो को गद्य और पद्य दोनो ही विधाओं में साकार अभिव्यक्ति देने का प्रयास भी किया । इसी बीच उनका एक विलक्षण रूप भी हमारे समक्ष उदित हुआ । एक साहित्यकार का रूप । साहित्य के प्रति विविध भाषाओं में उनके साहित्यिक योगदान को भुलाया नही जा सकता । उन्होंने छन्दबद्ध रचनाएँ भी लिखी। आलेख भी लिखे । उनके व्याख्यान अखबारों में भी प्रकाशित हुए । बाद में उनके भाषणों के संकलन भी प्रकाशित हुए । उनकी ये पुस्तके साहित्य जगत में अत्यन्त लोकप्रिय हुई । परिव्राजक, प्राच्य और पाश्चात्य तथा वर्तमान भारत । इसके अतिरिक्त अनेक अन्य लेख और कविताएँ व अनुवाद कार्य भी उन्होने साहित्यिक योगदान के रूप में प्रस्तुत किए । आरम्भ में उनकी भाषा इतनी परिमार्जित नही थी । क्योंकि स्वामी जी का लक्ष्य साहित्य रचना करना कदापि नही था । वे तो अपनी अनुभूति अपने उद्गार आम जनता तक पहुँचाना चाहते थे और मानवता का उद्धार करना चाहते थे । उनकी समृद्ध और सशक्त लेखनी ने समय पाकर परिपक्वता अर्जित की और उनकी अनेक शिक्षाप्रद रचनाएँ स्कूलों–कालेजों की पाठ्यपुस्तकों में

भावी युवा पीढी के लिए राष्ट्र सेवा और मानवधर्म का पथ आलोकित कर रही है। स्वामी जी ने समाज में परिव्याप्त धार्मिक अनियमितताओं के तुलनात्मक अध्ययन के रूप में प्राच्य और पाश्चात्य नामक पुस्तक में कृष्ण और ईसा के अनुयायियों की धार्मिक आस्था को नवींनतम परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है । इस पुस्तक के माध्यम से दोनों महाद्वीवों की तुलना स्वामी जी के गहन अध्ययन और अनुभव का परिणाम है । स्वामी जी की एक अन्य पुस्तक जो बहुत ही लोकप्रिय हुई वह है परिव्राजक । इस पुस्तक का सृजन स्वामी जी ने अपनी यूरोप यात्रा के समय किया था । यह पुस्तक कलकता की सामान्य बोलचाल की भाषा में रची गई है। इसमें स्वामी जी ने अपने विचारों को सामान्य पाठक तक पहुंचाने हेतु ही सरलतम जनभाषा का प्रयोग किया है ।

स्वामी जी की बहुचर्चित एव लब्ध प्रतिष्ठ पुस्तक वर्तमान भारत है । स्वामी जी ने इस पुस्तक के माध्यम से तत्कालीन भारत का सामाजिक, राजनैतिक–धार्मिक–सांस्कृतिक चित्र खींचने का सफल प्रयास किया । भारत की गौरवशाली संस्कृति एवं जनजीवन का चित्रण करते हुए स्वामी जी ने इसके ह्रास की कथा को अत्यन्त मर्मस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत करते हुये भारत के निर्धन–पिछडे लोगो के उत्थान की चिन्ता व्यक्त की है । बंगला मे रचित इस पुस्तक की भाषा शैली अत्यन्त परिमार्जित और साहित्यिक है । इसके अतिरिक्त उनके अनेक व्याख्यान विभिन्न भाषाओं की पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए । शिकागों की विश्व धर्म संसद में भाग लेने के बाद तो विश्व की सभी देशों की पत्र–पत्रिकाएँ उनके आलेख प्रकाशित कर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करने लगी थी । उनके लोकप्रसिद्ध आलेखों में से कुछेक को वर्णित करना ही समीचीन होगा । बंगला–हिन्दी–अग्रेजी में उनके ख्याति प्राप्त एवं बहुचर्चित आलेख है । रामकृष्ण आ तहर उक्ति पेरिस प्रदर्शिनी, ज्ञानार्जन, नृवंश विद्या, वर्तमान समस्या, भवार कथा । सभी निबन्धों में उनके मौलिक विचार और अवधारणाएँ मुखरित हुए है । इन निबन्धों की भाषा–शैली और श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति उनकी बोधात्मक प्रतिभा, प्रगतिवादी विचारधारा और साहित्यिक–अभिरुचि का ही संकेत देती है।

निबन्ध (गद्य) के समान ही कविता (पद्य) के क्षेत्र में ही स्वामी विवेकानन्द जी ने प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूपेण महत्वपूर्ण योगदान दिया है । कविता वास्तव में अनुभूति की ही सुन्दर शब्दों में अभिव्यक्ति होती है । अगर देखा जाए तो स्वामी जी ने वेदान्तवाद और और हिन्दू धर्म के प्रचारक के रूप में भारतीय संस्कृति के प्रचार प्रसार हेतु अनेक ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया । उनके यही भाव उनकी कविताओं में भी परिलक्षित होते है। कवित्व शक्ति भी दैवीय शक्ति का ही परिवर्तित प्रारूप है । उनकी अंग्रेजी और बंगला में रचित अनेक कविताओं का हिन्दी अनुवाद हो चुका है । इन्ही कविताओं के माध्यम से स्वामी जी के काव्य के क्षेत्र में दिए योगदान को आधुनिक कालीन साहित्यिक योगदान के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में शामिल किया जा सकता है । उनकी बंगला

कविताएँ गाई गीत घुनांते तोमाय का हिन्दी अनुवाद गाता हूँ मै गीत तुम्हे सुनानें को तथा काली माता कविताएं अत्यन्त लोकप्रिय हुई । अपनी कश्मीर यात्रा के दौरान विदेशी अनुयायियों के समक्ष उन्होने अपनी मौलिक कविता चौथी जुलाई के प्रति अमेरिकन स्वाधीनता दिवस को ध्यान में रखकर रची थी। इसी प्रकार आध्यात्मिक चेतना की अभिव्यक्ति की साकारात्मक अभिव्यक्ति से परिपूर्ण उनकी कविता जीवित–ईश्वर अत्यन्त प्रसिद्ध हुई । इसी प्रकार अमेरिका में रची गई उनकी कविता सन्यासी का गीत भी अत्यन्त लब्धप्रतिष्ठ कविता है । इस कविता में भारतीय–वेदान्त वाद की विचारधारा परिलक्षित होती है । इनके अतिरिक्त स्वामी जी की अनेक कविताएं सखा के प्रति , नाचे उस पर श्यामा, सागर के वक्ष पर, जाग्रत भारत के प्रति, शिवसंगीत, आदि अत्यन्त प्रभावोत्पादक कविताएं प्रसिद्ध हुई।

संस्कृत भाषा के ज्ञाता होने के कारण स्वामी जी ने अनेक भक्तिपरक स्तोत्रों की भी रचना की थी । उनकी अनेक रचनाओं में संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित होता है । इसी प्रकार बंगला की रचनाओं में सामान्य जन साधारण की भाषा का प्रयोग मिलता है । उनकी भाषा और शैली–साहित्यिक क्षेत्र में विशेष सम्मान की अधिकारिणी है । स्वामी जी ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति हेतु जिस भी विधा को चुना । उसमे उन्हे आशातीत सफलता मिली । भाषा का गुण सम्प्रेषणीयता है। स्वामी जी की भाषा न केवल उनकी बात आम मानव तक पहुँचाने में सक्षम थी अपितु उनके विचारों को उद्वेलित करने में भी उसने अपना प्रभाव दिखाया । स्वामी जी क्रांतिकारी एवं प्रगतिशील विचारों के भी स्वामी थे । उनकी लेखनी में अदभुत क्षमता थी । उनके लेखों और कविताओं ने भारतीय साहित्य की श्रीवृद्धि करने मे अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है । उन्होने इस साहित्यिक योगदान को समूचे भारतीय साहित्यिक सन्दर्भ से जोडकर आधुनिक भारतीय साहित्य को सम्मानित और गौरवान्वित किया है । निस्सन्देह वे एक निस्वार्थ राष्ट्रभक्त, मानवसेवी आध्यात्मिक गुरु–महामानव और श्रेष्ठ साहित्यकार थे ।

जीवित ईश्वर – कविता का अंश (1897)

वह जो तुम में और तुम्हारे बाहर है
जो सभी हाथों से कार्य करता है
जो सब के पैरों पर चलता है
जिसकी देह तुम सब हो
उसको पूजो और दूसरी मूर्त्तियों तोड़ दो !
ओ मूर्ख जो जीवित ईश्वर की उपेक्षा करता है
और जिसकी अनन्त परछाई से सारा संसार भरा है
जब तुम काल्पनिक छाया के पीछे दौडते हो
वह अकेला संघर्षों व द्वन्दों का नेतृत्व करता है
उस को पूजो जो केवल दर्शनीय है
अन्य सब मूर्तियों को तोड दो ।"

सन्यासी का गीत–कविता का अंश (1895)

छेड़ो सन्यासी वह तान मनोहर

गाओ वह गान जगा जो अत्युच्च हिमाद्रि शिखर पर

सुगभीर अरण्य जहाँ है, पावर्त्य प्रदेश जहाँ है

गाओ, गाओ सन्यासी,

गाओं व गाओं वह गायन सुन्दर,

ॐ तत् सत् ॐ ।

तोड़ो जंजीरे जिनसे जकड़े है पैर तुम्हारे

वे सोने की है तो क्या कसने में तुमको हारे ?

इस द्वन्द्व भाव को त्यागो है त्याज्य उभय आलम्बन ।

आदर गुलाम पाए या कोड़ो की मार खाए।

वह सदा गुलाम रहेगा कालिख का तिलक लगाए।

स्वतंत्र किसे कहते हैं – वह जान नहीं है पाता

स्वाधीन साख्य जीवन का – उस की न समझ में आता ।

जिसने अपने को जीता उसने जय पाई सब पर

यह तथ्य जान फन्दे में पड़ना मत बुद्धि गँवाकर

चिन्ता न करो तनिक भी इस नश्वर शरीर की गति पर

यह देह रहे या जाए छोडो तुम इसे नियति पर

इस विधि से छीज दिनोंदिन है कर्म स्वपित बल खोता

बन्धन छूटता आत्मा का, फिर उस का जन्म न होता

फिर कहाँ रह गया– मैं तू मेरा तेरा नर ईश्वर ?

सत्कर्मवाद

स्वामी विवेकानन्द ने एक कर्मयोगी की तरह आजीवन कर्म किया और अपने शिष्यों को एक प्रेरणास्रोत के रूप में कर्म करने की ही शिक्षा दी । शिक्षा, समाज, राष्ट्र, धर्म, अध्यात्म कोई भी क्षेत्र हो स्वामी जी ने अपनी विचारशक्ति से सभी क्षेत्रों में पदार्पण किया । स्वयं गांव--2 नगर--2 चलकर गए और लोगो को निरन्तर अपने हितो से उपर उठकर देशहित में कर्म करने के लिए प्रेरित ही नही उत्साहित भी किया। स्वामी जी ने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया था । उन पर भारतीय वेदान्तवाद का बहुत गहरा प्रभाव पडा । भारतीय शास्त्रों में कर्म को सत् और असत् कार्यो में विभक्त करके मनुष्य को सत्कार्य ही करने के लिए कहा गया है । श्रीमद्भगवद्गीता में तो यहां तक भी कहा है कि अगर हम अपने किए कर्मो मे आसक्त नही होते तो हमारी आत्मा पर किसी प्रकार का प्रभाव नही पड़ता । अगर मनुष्य अपने मन और इन्द्रियों को वश में कर ले तो वह पूरे विश्व को जीत सकता है । संक्षेप में अच्छे कर्मो का फल अच्छा ही मिलता है और दुष्कर्मो का फल बुरा । मन को नियन्त्रित करने से मनुष्य सत्कर्मो की ओर प्रवृत्त होता है । स्वामी जी के अनुसार -- कर्म करो अवश्य करो पर उस कार्य अथवा विचार को अपने मन पर कोई गहरा प्रभाव न डालने दो । हम देखते है कि जो भी कर्म हम करते है उसकी छाप हमारे मन पर रह जाती है ।

स्वामी जी कर्म करने का एक साकारात्मक सिद्धान्त प्रस्तुत करते है । उनका कहना था कि कर्म तो सभी करते हैं । मगर एक दास की तरह विवशतापूर्वक । दासवत् कार्य करने से उस कार्य में हम पूर्णतः लिप्त नही हो पाते । स्वामी जी का कथन है कि मुक्त भाव से कार्य करो, प्रेम सहित कर्म करो । प्रेम शब्द का यथार्थ अर्थ समझना बहुत कठिन है । बिना स्वाधीनता के प्रेम आ ही नही सकता । दास में कर्म के प्रति सच्चा प्रेम होना सम्भव ही नही । दास आज्ञावश कार्य करता है । स्वेच्छा से नहीं । उसमे हमारा प्रेम नही रहता इसलिए वह सच्चा कार्य नहीं हो सकता । तुम जब भी कर्म करो उसके बदले में कुछ भी आशा न रखो । तभी अनासक्ति की भावना पनपेगी । स्वामी जी के अनुसार अगर हम साकार ईश्वर में विश्वास रखते हैं तो हमे अपने कर्मो को उपासना की तरह ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए । ऐसे पुरुष को पाप छू तक नही सकेगा ।

स्वामी जी ने आध्यात्मिक धरातल पर मानव को पशुता से ऊपर उठने की प्रेरणा दी और मानव से महामानव होने की यात्रा के लिए सत्कर्म करने की आवश्यकता पर बल दिया । उन्होने कहा सत्कर्म हमें ईश्वरोन्मुखी मार्ग की ओर ले जाते है और दुष्कर्म हमे पतन की ओर प्रवृत करते हैं । उनके अनुसार यदि किसी कर्म द्वारा हम भगवान की ओर बढ़ते है तो वह सत् कर्म है और वह हमारा करणीय कर्तव्य है, परन्तु जिस कर्म द्वारा हम नीचे गिरते है, वह बुरा है वह हमारा कर्तव्य नहीं । इसी लिए हमारे धर्म--कर्म के विद्वानों ने सभी शास्त्रों के निष्कर्ष स्वरुप कहा था।

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्
परोपकारः पुण्याय–पापाय परपीडनम्

अर्थात् – अठारह पुराणों में व्यास जी ने दो ही बाते मुख्य रूप से कही है कि परोपकार ही पुण्य है और पर दुःख (पर पीडा) ही पाप है ।

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कर्म के विषय में अत्यन्त विस्तार से वर्णन किया है । स्वामी जी ने एक कर्मयोगी के रूप में कर्म को एक दार्शनिक दृष्टि प्रदान की है । उन्होने मानवीय संवेदना के धरातल पर कर्म को एक नई परिभाषा से अलंकृत किया। उनके अनुसार कर्मयोग का अर्थ है मौत के मुँह में भी बिना तर्क–वितर्क के सब की सहायता करना भले ही तुम लाखों बार ठगे जाओ । पर मुँह से एक बात तक न निकालो और तुम जो भले कार्य कर रहे हो उनके सम्बन्ध में सोचो तक नही । निर्धन के प्रति किए गए उपकार पर गर्व मत करो और न उनसे कृतज्ञता की आशा रखो । बल्कि तुम ही उसके कृतज्ञ होओ कि उसने तुम्हे दान देने का एक अवसर दिया है । ऐसे उदार कर्मयोगी स्वामी विवेकानन्द ने कर्म करने के लिए कर्म का उदारीकरण कर दिया ।

स्वामी जी के अनुसार कार्य का चुनाव मत करें । कार्य कोई भी छोटा बडा नहीं होता । उनके अनुसार कर्म करना हमारी नियति है । अतः हमे कर्म करते रहना चाहिए हम कर्मशील बने । अपने मनपसन्द कार्य को तो कोई भी कर सकता है । मगर बुद्धिमता यही है कि प्रत्येक कार्य को करने की आदत डालें । उसमें अपना मन लगाएं। स्वामी जी के शब्दों में हम कर्म करते चले जो कार्य हमारे हिस्से में आया है उसे करें और कार्य के चक्कर में अपना कन्धा लगाते रहें तब हमे उस ज्योतिर्मय के दर्शन होना निश्चित है – कोई कार्य तुच्छ नहीं, यदि मनपसन्द कार्य मिल जाए तो मूर्ख भी उसे पूरा कर सकता है, किन्तु बुद्धिमान पुरुष वही है । जो प्रत्येक कार्य को अपने लिए रुचिकर बना ले । इस संसार में प्रत्येक वस्तु वटवृक्ष के समान है जो यद्यपि देखने में तो सरसों के दाने के समान लघु दिख पडता है तथापि अपने अन्दर विशाल वट बृक्ष को छिपाए हुए है । सचमुच महान वही है जो यह बात परख कर प्रत्येक कार्य को महान बनाने में सफलता प्राप्त कर दिखाए । स्वामी जी इस बात के पक्षधर थे कि मनुष्य को किसी भी दबाव में अथवा समाज में प्रतिष्ठा पाने अथवा समाज को प्रसन्न करने के लिए ही कार्य नही करना चाहिए। मनुष्य को स्वेच्छा से अपनी अन्तरात्मा की आवाज सुनकर तथा राष्ट्र के उत्थान को ध्यान में रखकर ही समाज सेवा में प्रवृत होकर कार्यरत होना चाहिए। इससे समाज को तो लाभ होगा ही, अन्तरात्मा भी सन्तुष्ट होगी । स्वामी जी ने मन–शरीर और बुद्धि के समायोजन से किए गए कार्य को ही श्रेष्ठ कार्य स्वीकार किया । अगर हम अपने अन्दर विद्यमान ईश्वरीय चेतना की झलक पाना चाहते हैं तो हमें अपनी आत्मा के अनुसार ही कार्यों में प्रवृत होना चाहिए। स्वामी जी का कथन है ''कभी किसी ने समाज को प्रसन्न रखने और साथ ही महान कार्य करने में सफलता नही पाई । सभी को केवल अपनी अन्तरात्मा के आदेशों का पालन करते रहना चाहिए और यदि वह आदेश सही और शुभ है तो समाज को उसका

अनुसरण करना ही होगा । भले ही उनकी मृत्यु के सदियों बाद करें । हम मन, बुद्धि और शरीर से अपने कार्य में जुट जाएं और जब तक केवल एक ही विचार के लिए अन्य सब कुछ त्यागने के लिए तैयार नहीं होंगे तब तक हमें कभी भी प्रकाश का दर्शन नहीं होगा कभी भी नही ।''

स्वामी जी ने साहसी–कर्मठ और युवा शक्ति का आह्वान किया और उन्हे निरन्तर कर्मरत रहने की प्रेरणा देते हुए कहा था उठो–जागो–और चलते रहो जब तक तुम्हे लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए । उन्होने कर्मशील व्यक्ति को आजीवन कार्य करते रहने के लिए उत्साहित किया । केवल उत्साहित ही नहीं किया उन्होंने स्वयं आजीवन कार्यरत होने का प्रमाण भी दिया । दिन रात कार्य करते रहने के कारण उनका स्वास्थ्य भी गिर गया था उन्होंने परवाह नहीं की । वे देश की छवि बदलना चाहते थे। अपने अन्दर की क्षमता को वे देश के लिए अर्पित करना चाहते थे । सभी भारतीयों को उन्होने अपने अन्दर उस असीम दिव्य शक्ति को पहचानने हेतु जाग्रत किया उन्हे चेताया और देश और समाज के प्रति अपने कर्तव्य से अवगत कराया उनके अनुसार ''सत्य के मार्ग पर कर्म करते हुए संघर्ष करते हुए मृत्यु को प्राप्त होना–सांसारिक कीडे की तरह मरने से कही अधिक श्रेयस्कर है । उन्होने यह भी कहा कि ''किसी भी कर्म को करते हुए यह अनुभव करो कि जैसे सारा दायित्व आपके कन्धों पर ही है ।''

स्वामी जी ने युवाओं को प्रेरित करते हुए कहा कि संघर्ष करते हुए तुम्हे विरोध और बाधाओं का सामना भी करना होगा । क्योंकि कोई भी कार्य संघर्ष के बिना सम्पन्न नहीं होगा विरोध होगा तो संघर्ष की भावना अधिक प्रबल होगी । स्वामी जी के शब्दो में ''नैतिकता भरे धैर्य के साथ आरम्भ किए शुभकार्य का विरोध उन कर्म योगियों की नैतिक शक्ति को और भी अधिक जाग्रत करेगा । जिस मार्ग पर कोई विघ्न नहीं होता वह मार्ग मनुष्य को नैतिक पतन की ओर ले जाता है।''

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि स्वामी जी का कर्मसिद्धान्त केवल उपदेशपरक नही है । यह एक अनुभवजन्य उपलब्धि का परिणाम है । उनकी कथनी और करनी की समानता उनकी जीवन शैली का एक महत्वपूर्ण अंत था । स्वामी जी का जीवन और उनका कर्म–सिद्धान्त निस्सन्देह आज भी उतना ही सार्थक और प्रेरणादायक है जितना उनके अपने समय में था ।

अगर आप भारत को समझना चाहते है, तो स्वामी विवेकानन्द का अध्ययन कीजिए। उनमें सब सकारात्मक है, नकारात्मक कुछ भी नहीं है।

रविन्द्रनाथ टैगोर

शिक्षण सिद्धान्त

स्वामी विवेकानन्द जी का शिक्षा दर्शन मूलतः अध्यात्मवाद पर ही आधारित है । स्वामी जी ने वेदों–उपनिषदों का गहन अध्ययन किया था अतः उनके जीवन पर धर्म और अध्यात्म का गहरा प्रभाव था । आपने धार्मिक, संस्कार और चरित्र निर्माण करने वाली शिक्षा पर बल दिया । उनका विश्वास था कि प्रत्येक प्राणी के अन्दर एक दिव्यज्योति के रूप में ज्ञान स्वरूप ईश्वर विद्यमान है जिसे लोग आत्मा के नाम से जानते है। इस ज्ञान स्वरूप ईश्वर को जानना ही वास्तिक धर्म है । उनका अटल विश्वास था कि सभी प्रकार का सामान्य तथा आध्यात्मिक ज्ञान मानव मन के अन्दर समाहित है । मनुष्य इसे जान नही पाता है अतः यह अन्दर ही रह जाता है। स्वामी जी के अनुसार कोई व्यक्ति किसी दूसरे को सिखा नही सकता । प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही सीखता है । शिक्षक केवल सिखाने का प्रयास करता है और सुझाव प्रस्तुत करता है जिससे वह सीखने वाले को प्रेरित करता है । उनके अनुसार कुछ परीक्षाएं पास कर लेने का अर्थ शिक्षा प्राप्त करना नहीं है । अच्छा भाषण देने वाला भी स्वयं को शिक्षित समझता है जो गलत अवधारणा है । वास्तव में शिक्षा का उद्देश्य बालक को जीवन के संघर्ष के लिए तैयार करना है । इसके साथ–साथ शिक्षा चरित्र निर्माण और समाज सेवा की भावना पैदा करने का कार्य भी करे इसी से राष्ट्र उन्नत होगा। स्वामी जी के अनुसार जो शिक्षा मानव की दुष्वृत्तियों का निराकरण कर उसमे सद्वृत्तियां जागृत नहीं कर सकतीं ऐसी शिक्षा का क्या लाभ ? शिक्षा बालक को साहसी बनाए ताकि वह संकटों का सामना कर सके । उन्होने कहा हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जो मनुष्य के अन्दर विद्यमान शक्ति का विकास करे । मनुष्य स्वावलम्बी बने । उन्होने कहा कि शिक्षा सैद्धान्तिक नही अपितु व्यावहारिक होनी चाहिए । अपने समय की शिक्षा का निषेध करते हुए उन्होने भारतीय संस्कृति के अनुरूप बालक के चरित्र गठन, मनोबल में वृद्धि तथा प्रतिभा को विकसित करने वाली शिक्षा देने पर जोर दिया । उनके अनुसार शिक्षा मानव मन की आन्तरिक वृत्तियों का विकास करे । धार्मिक ज्ञान को पुस्तको की अपेक्षा व्यवहार–आचरण और संस्कार के रूप में जीवन में लाने का प्रयास करने की आवश्यकता है । गहन अध्ययन के निए उन्होने चित की एकाग्रता को अनिवार्य बताते हुए कहा कि चित की एकाग्रता की शक्ति ही वास्तव में ज्ञान प्राप्त करने की कुंजी है । इस शक्ति को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है । शिक्षा अनिवार्य रूप से बालक का शारीरिक–मानसिक–नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास करे । इससे उसके अन्दर विद्यमान शक्ति का स्वतः विकास और प्रकाश सम्भव है । इसी से आत्मिक निष्ठा और श्रद्धा जैसे सद्गुण विकसित होंगे ।

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का अर्थ उन विचारों या तथ्यों को बालको के अन्दर भरना नही है अथवा उनके दिमाग के अन्दर बलपूर्वक धकेलना नही है । उन्होने कहा है कि "यदि शिक्षा का अर्थ केवल सूचनाएँ होता तो पुस्तकालय संसार के सर्वश्रेष्ठ सन्त होते और विश्वकोष ऋषि बन जाते ।" शिक्षा तो मानव

के अन्दर विद्यमान ज्ञान के प्रकाश का प्रकटीकरण ही है । शिक्षा के साधन केवल एक वातावरण तैयार करने में सहायक तत्त्व के रूप में कार्य करते हैं । स्वामी जी के अनुसार'' शिक्षा उस सन्निहित पूर्णता का प्रकाश है जो मनुष्य में पहले से ही विद्यमान है ।''

स्वामी जी बालकों को शिक्षा प्रदान करने हेतु प्राचीन गुरुकुल परम्परा का वातावरण तैयार करने की प्रौढ़ता करते है । उनके अनुसार शिक्षा का चरम लक्ष्य आध्यात्मिक विकास है । केवल अध्यात्मिक नही उन्होने लौकिक और भौतिक विकास को भी साथ मिलाकर चलने की बात कही है । लेकिन इन दोनो में सन्तुलन होना चाहिए । स्वामी जी के अनुसार भौतिक प्रगति की ओर अधिक प्रवृति के कारण ही भारत का आध्यात्मिक क्षेत्र पीछे रह गया अगर भौतिक विकास ही की तरह हम युगीन संदर्भों में आध्यात्मिक उन्नति की ओर ध्यान देते तो हम दूसरे देशों से कहीं आगे निकल जाते । स्वामी जी ने आध्यात्मिक उन्नति के उपदेशों के साथ – 2 भाषा, भूगोल, अर्थशास्त्र, गणित, मनोविज्ञान–कला–व्यवसाय तथा कृषि विज्ञान आदि विषयों के अध्ययन की बात भी कही है । इसके साथ – 2 उन्होने खेलकूद और व्यायाम को भी छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्य बताया है।

जैसा कि पहले भी कहा गया है कि स्वामी जी ने गुरु शिष्य परम्परा को बनाए रखने वाली गुरुकुल प्रणाली को अपनाने पर बल दिया । गुरु शिष्य सम्बन्धो की घनिष्ठता का शिक्षण पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है । गुरु अपने व्यावहारिक ज्ञान से बालक को अच्छे संस्कार प्रदान करता है और उनके अन्दर के विद्यमान ज्ञान को उद्घाटित करने में सहायता प्रदान करता है । क्योंकि स्वामी जी की शिक्षा के संदर्भ में मान्यता है कि ''शिक्षा उस सन्निहित पूर्णता का प्रकाश है जो मनुष्य में पहले से ही विद्यमान है ।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य ज्ञान को उद्घाटित करना ही है । लेकिन इसके लिए अज्ञानता के तम को दूर करना होगा । कहा भी है तमसो मा ज्योतिर्गमय –अर्थात् हे ईश्वर हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो । इसी से अन्तर्निहित पूर्णता की प्राप्ति संभव है । शिक्षा द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास अपेक्षित है । उसके शारीरिक मानसिक, आध्यात्मिक और नैतिक गुणों का विकास ऐसी शिक्षा द्वारा ही संभव है । शिक्षा मानव के अन्दर नैतिक गुणों को विकसित करने में सहायक हो । शारीरिक विकास के समान ही हमारे अन्दर का ज्ञान भी स्वाभाविक रूप से ही विकसित होता है अतः स्वामी जी ने शिक्षार्थियों को सुझाव दिया कि ''अपने अन्दर जाओ और उपनिषदों को अपने अन्दर से बाहर निकालो । तुम सबसे महान पुस्तक हो जो कभी थी अथवा होगी । जब तक अन्तरात्मा नही खुलती तब तक समस्त बाह्य शिक्षण व्यर्थ है ।'' इस निकास और विकास के लिए शिक्षक शिक्षा के संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द जी का विश्वास है कि आप किसी भी बालक को शिक्षा देने में उसी प्रकार असमर्थ हो जिस प्रकार किसी पौधे को विकसित करने में । जैसे पौधा अपनी प्रकृति का

विकास स्वयं ही कर लेता है ठीक उसी प्रकार बालक भी स्वयं को शिक्षित कर लेता है । लेकिन आप बालक को अपने ढंग से शिक्षित करने अथवा आगे बढने में सहायता दे सकते हो । आप केवल शिक्षित होने के रास्ते में आने वाली बाधाएँ हटा सकते हो इससे अधिक कुछ नहीं । बस ज्ञान अपने स्वाभाविक ढंग से स्वयं प्रकट हो जाएगा । जमीन को कुछ नर्म कर दो ताकि उसमें से बीज को उगना आसान हो जाए । उस बीज से उगते हुए पौधे की शारीरिक बनावट के लिए केवल तुम्हे एक परिवेश तैयार करना है । मिट्टी,पानी,प्रकाश और वायु आदि का आयोजन कर दो पौधा तो स्वयं उगेगा–विकसित स्वयं होगा । बस आपका काम साधन सम्पन्नता और तैयारी के साथ ही समाप्त हो जाता है । वह अपनी आवश्यकतानुसार उस परिवेश से जो चाहिए होगा ले लेगा । ऐसे ही अध्यापक केवल बालक की प्रतिभा के विकास हेतु ज्ञान रूपी बीज को उगने के लिए विद्यालय/गुरुकुल में परिवेश तैयार करता है । जैसे हम अभिनय के लिए मंच तैयार करते है। बालक स्वयं अपने आप को शिक्षित करता है । जो अध्यापक यह अनुभव करता है कि वह बालक को शिक्षित कर रहा है वह भ्रम का पालन कर रहा है । शिक्षक का कार्य केवल उद्‌बोधन का है। शिक्षक को बालको के लिए हाथ–कान–पैर और आखों के उचित प्रयोग के माध्यम से अपनी बुद्धि का प्रयोग करना सिखाना है । किसी व्यक्ति ने दूसरे को सलाह दी कि गधे को पीटने से घोडा बन जाता है । गधे के मालिक ने घोडा बनाने की इच्छा से एक गधे को इतना पीटा कि गधा बेचारा मर गया । इस प्रकार बालको को पीट–पीट कर शिक्षित करने की प्रणाली का अन्त कर देना चाहिए ।

स्वामी जी का विश्वास था कि ''यदि आप केवल परखे हुए कोई पांच विचार अथवा सद्‌गुण आत्मसात् कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हो तो तुम एक पूरे ग्रन्थालय को कण्ठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो ।''

दूसरों के विचारों को रटकर – उन्हे अपने मस्तिष्क में भर कर कुछ डिग्रियाँ पाकर स्वयं को शिक्षित कहना स्वामी जी की दृष्टि में गलत है । शिक्षा वह है जो जन समुदाय को जीवन के संघर्ष और निरन्तर संग्राम के लिए तैयार करे जो शिक्षा मानव के अन्दर सिंह जैसा साहस नहीं पैदा करती वह समय की बर्बादी के सिवा कुछ नहीं है । स्वामी जी के अनुसार पहले हम अपनी संस्कृति को जाने । अपनी भारतीय परम्परा और परिवारों को समझें । तत्पश्चात् हम आंगल, भाषा, साहित्य और विज्ञान का अध्ययन करें । उद्योगो को विकसित करें । शिक्षा का उद्देश्य मानवीय गुणो का विकास हो । सभी प्रशिक्षणों का उद्देश्य मनुष्य का विकास करना हो । जिस प्रक्रिया से मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और प्रकाश संयमित होकर फलदायी बन सके उसी का नाम शिक्षा है । स्वामी जी का स्पष्ट तौर पर यह मानना था कि हमें दुर्दमनीय, प्रचण्ड इच्छा शक्ति वाले मनुष्यों की आवश्यकता है । क्योंकि हम सभी क्षेत्रों में मनुष्य बनाने वाली शिक्षा ही चाहते हैं ।

स्वामी विवेकानन्द स्वाध्ययी थे । उन्होने अपने अनुभव से यह जान लिया था कि ज्ञान प्राप्ति के लिए एकाग्रचित होना अनिवार्य है । सामान्य मानव से लेकर योगी साधको तक ने एकाग्रचित होकर ही अपने लक्ष्य को प्राप्त किया है। ज्योतिषी, गणितज्ञ, वैज्ञानिक, विद्यार्थी सभी अपने अपने क्षेत्र में एकाग्रचित हो कर ही अध्ययन करके विश्लेषण करते है और अन्तिम परिणाम निष्कर्ष तक पहुंचते है । इसी प्रकार अगर शिक्षार्थी भी एकाग्रचित हो कर लीन और मगन हो कर अध्ययन करे तो उसे अवश्य आशातीत सफलता अर्जित होगी । व्यवसाय में एकाग्रता होगी तो आय अधिक होगी । चर्मकार, स्वर्णकार, कलाकार, रसोईया, कोई भी व्यक्ति जितनी एकाग्रता से अपने कार्यक्षेत्र में कार्यरत होगा उतना ही उत्पाद अच्छा होगा । धन अर्जित करने अथवा ईश्वर की भक्ति करने में जितना अधिक मन एकाग्र होगा उतना ही ज्ञान अर्जन और कार्यक्षमता बढेगी । पशुओ में एकाग्रता की शक्ति बहुत कम होती है । जो लोग पशुओं को प्रशिक्षित करते है उन्हे बहुत कठिनाइयों का सामना करना पडता है । पशु को जो कुछ सिखाया जाता है वह जल्द भूल जाता है । पशु अपना मन अधिक समय एकाग्र नही रख सकते । यही मनुष्य और पशु के सीखने में अन्तर है । पढते समय बच्चों को हम यही कहते है कि ध्यान पूर्वक पढ़ो–यही ध्यान ही एकाग्रता है क्योंकि एकाग्रता के बिना ध्यान लग ही नही सकता । स्वामी जी के अनुसार "मन की एकाग्रता ही शिक्षा का सार है ।"

स्वामी जी का विश्वास था कि हम उस वस्तु की और एकाग्र होते है जिसे हम पाना चाहते है । हम उस वस्तु को पाना चाहते है जो हमारे लिए उपयोगी हो सकती है । उसके प्रति हमारी श्रद्धाभाव उमडता है । यही हमे ज्ञान की ओर प्रेरित करता है । 'गीता में कहा गया है । श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्' अतः श्रद्धाभाव वाला जीव ही ज्ञान प्राप्त करता है । अतः ज्ञान प्राप्ति के लिए एकाग्रता के साथ–साथ हमें श्रद्धाभाव भी लाना होगा । इसी से हमारे अन्दर आत्म विश्वास जागेगा और हम अपनी समस्याओं का समाधान करने में समर्थ सिद्ध होंगे । स्वामी विवेकानन्द का कथन है कि "मेरे गुरुदेव कहा करते थे, जो अपने को दुर्बल समझता है, वह दुर्बल ही हो जाता है और यह बिल्कुल सच है । तुममे यह श्रद्धा आनी ही चाहिए । पाश्चात्य जातियों में जो कुछ भौतिक शक्ति का विकास देखते हो, वह इसी श्रद्धा का परिणाम है। कारण, उन्हे अपने बाहुबल पर विश्वास है और यदि तुम अपने आत्मबल पर विश्वास रखो तो परिणाम और भी कितना अधिक न होगा ।"

साकारात्मक विचारों से आत्मविश्वास में वृद्धि होती है और इसी से व्यक्तित्व का निर्माण । यही शिक्षा और अध्यात्म का अन्तिम लक्ष्य भी है। अन्तर्निहित शक्ति की वास्तव में व्यक्तित्व का निर्माण करती है । शिक्षा अपनी नैतिक मान्यताओं के माध्यम से अच्छे बुरे – शुभ – अशुभ का निर्णय लेने में सक्षम बना कर बालक के आचरण को जीवन मूल्यों की कसौटी पर अच्छा बनाने का प्रयास करती है । इसी से वह एक आदर्श मानव के गुणों से अलंकृत होता है ।

स्वामी विवेकानन्द जी ने शिक्षा के क्षेत्र मे जिस पहलू पर अधिक बल दिया वह है स्त्री शिक्षा । स्वामी जी ने इस बात पर प्रश्न चिन्ह लगाते कहा था कि यह समझना अत्यन्त कठिन है कि हमारे देश में स्त्रियों और पुरुषों के बीच इतना अन्तर क्यों है? वेदान्त में अनेक बार कहा गया कि आत्मा सभी जीवो में विद्यमान है । हमने अपने अतीत से भी कुछ नहीं सीखा । हमने नारी जाति को वैदिक–साहित्य के अध्ययन से वंचित रखा । जब कि वैदिक काल में मैत्रेयी, गार्गी, लोया आदि विदुषियों ने ऋषियो का कार्यभार सम्भाल किया था । गार्गी ने तो हजारो ब्राह्मणो की उपस्थिति में याज्ञवल्कय ऋषि की सभा में शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी थी । इतिहास साक्षी है कि सभी उन्नत राष्ट्रों ने नारी वर्ग को समुचित सम्मान देकर ही महानता अर्जित की है । स्त्री शिक्षा की ओर गम्भीरता से विचार करना चाहिए स्त्री शिक्षा का विस्तार धर्म के केन्द्र बनाकर किया जाना चाहिए । मूल रुप से धार्मिक शिक्षा, चरित्र गठन और ब्रह्मचर्य का पालन अत्यन्त महत्वपूर्ण है । स्वामी जी के अनुसार – आज हर स्त्री को स्वावलम्बन की अवश्यकता है । आधुनिक युग में उन्हे आत्मरक्षा के सभी उपाय सीख लेना आवश्यक हो गया है । स्मरण रहे शिक्षित और धार्मिक माताओं के घर में ही महापुरुष जन्म लेते हैं । यदि स्त्रियाँ उन्नत हो जाएं, तो उनके बालक अपने उदार कार्यो के द्वारा देश का नाम उज्ज्वल करेंगे । तब तो संस्कृति ज्ञान शक्ति और भक्ति देश में जाग्रत हो जाएगी ।'' स्वामी जी ने शिक्षा के आलोक में इस ओर सबका ध्यानाकर्षण किया कि हमारा राष्ट्र झोपडियो में बसता है । इन झोपडियों में बसने वाली आत्माओं को वर्तमान समय में यथार्थ स्थिति का बोध कराओ । उन्हे शिक्षित करने के लिए प्रेरित करो । जब तक वे शिक्षित नहीं होंगे । देश का उद्धार न होगा । स्वामी जी प्रायः अपने सम्बोधनो में कहा करते थे कि ''मैं दार्शनिक नहीं हूँ, तत्ववेत्ता नही हूँ और कोई सन्त भी नहीं हूँ । परन्तु मै दरिद्र हूँ और दरिद्रों को प्यार करता हूँ। दरिद्रता और अज्ञान के गर्त में सदा से डूबे हुए इन बीस करोड (तब) नरनारियों के अभाव को कौन अनुभव करता है । किसके हृदय में उनके दुःखों के लिए टीस उठती है । उन्हे न कहीं प्रकाश मिलता है और न शिक्षा। उन्हे प्रकाश कौन देगा ? कौन उनको शिक्षा देने के लिए द्वार–द्वार भटकेगा?

स्वामी जी का अन्तिम उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से सभी अन्तरात्माओं को जाग्रत कर उन्नत करना था । उनका विश्वास था ज्ञान भले ही लौकिक को अथवा आध्यात्मिक प्रत्येक मानव के मन में है । प्रायः वह ज्ञान आच्छादित रहता है। ज्यों–2 अज्ञानता का आवरण हटता है – ज्ञान का प्रकाश होता है । हम कहने लगते है हमे समझ आ रहा है हम सीख रहे हैं । सभी ज्ञान और शक्तियाँ हमारे भीतर है इनका अनावरण ही वास्तविक शिक्षा है ।

स्वामी विवेकानन्द

डा. निर्मल कौशिक

विवेक और आनन्द का सुन्दर समायोजन थे स्वामी,
उच्च कुल, कुलीन वंश और अच्छा खानदान था नामी,
धन-संपदा अपार, उच्च विचार नहीं थी कोई खामी,
सद्गुण, नैतिकता और सदाचार की बाँह थी थामी।

पिता विश्वनाथ विद्वान और थे कानून के सच्चे सेवी,
दादा श्री दुर्गा चरण दत्त और माता भुवनेश्वरी देवी।
12 जनवरी 1863 को जन्मा बालक ले अद्भुत छवी,
नरेन्द्रनाथ नाम रखा फिर लाड से जो बना रहा नर सेवी।

अनेक गुणों का धारक स्कूल में अद्भुत खेल रचाता,
अध्यापकों, सहपाठियों मित्रों के मन को खूब लुभाता,
निडरता और वीरता के वह नित्य चमत्कार दिखलाता,
स्मरण शक्ति, दृढ़ इच्छा-शक्ति के कई प्रमाण दिखाता।

राम कृष्ण परमहंस गुरु ने सत्य की राह दिखाई,
ध्यान और योग की शिक्षा से ज्ञान की ज्योति जलाई।
तब नरेन ने हर मानव में ईश्वर की ही छवि पाई,
माँ शारदा ने गुरु बिछोह में धैर्य की राह बताई।

अमेरिका में भाईयो बहनों कह सबको चकित किया,
अपने तर्कों से उसने पूर्व और पश्चिम को मिला दिया।
विवेक के बिना आनन्द नहीं विवेकानन्द ने बता दिया,
मानव बनना ही श्रेष्ठ है, मानवता का गुण समझा दिया।

शिकागो विश्व धर्म संसद में 'अध्यात्म' परचम लहराया,
विश्व धर्म संसद में सबके मन को 'हिन्दू धर्म' लुभाया।
शिष्य बने फिर देश विदेश के ज्ञान का ऐसा दीप जलाया,
परमहंस का शिष्य गुरु बनकर लौट के भारत आया।

भारतीय संस्कृति और हिन्दू धर्म का गुणगान किया,
'वसुधैव कुटुम्बकम्' कहा, मानवता का संदेश दिया,
युवा शक्ति को जगाने हेतु स्वामी ने दृढ़ संकल्प लिया,
शतायु जितना कार्य सम्पन्न कर मात्र 39 वर्ष जिया।

उनकी 150वीं जन्मशती पर हमने पुनः संकल्प दोहराना है,
स्वयं जागकर, विश्व जगाकर देश का ऋण चुकाना है।
जाति-वर्ग का भेद भुलाकर हर निर्धन को गले लगाना है,
अध्यात्म के पथ पर चलकर भारत विश्व गुरु बनाना है।

आत्मज्ञान दिव्य शक्ति का सन्देश मानव को दिया,
एकाग्रता और जागृति का प्रकाश सब ओर किया।
त्याग क्या है ? बतलाने हेतु स्वयं सन्यास ले लिया,
आत्म विश्वास, साकार सोच युवाओं को उपहार दिया।

यद्यपि विवेकानंद अतीत भारत की नीव पर दृढ़ और परम्परा के प्रति गौरवान्वित रहे है, तो भी जीवन की समस्याओं के प्रति उनकी विचारधारा आधुनिक थी। अवसाद ग्रस्त तथा हतोत्साहित हिन्दू मन के लिए वे एक संजीवनी शक्ति के रूप में आये थे और उसमें उन्होने आत्मविश्वास तथा अतीत पर श्रद्धा का भाव पैदा किया।

जवाहरलाल नेहरू

संस्कृत–भाषा

डॉ. निर्मल कौशिक

संस्कारों का सर्वोत्तम भण्डार है संस्कृत,
हमारी नैतिकता का मूलाधार है संस्कृत,
सदाचार–सद्गुणों का प्रसार है संस्कृत,
वेदों–उपनिषदों का श्रृंगार है संस्कृत ।

सब भाषाओं की पालनहार है संस्कृत,
भारतीय जीवन का आधार है संस्कृत,
मानव मूल्यों में सदाचार है संस्कृत,
विश्वज्ञान, ब्रह्मज्ञान का सार है संस्कृत ।

मानव के लिए माँ का प्यार है संस्कृत,
ईश्वर द्वारा दिया गया उपहार है संस्कृत,
बच्चों के लिए बड़ों का दुलार है संस्कृत,
साहित्य सृजन का पूर्ण संसार है संस्कृत ।

ईश्वर को ऋषियों का आभार है संस्कृत,
वेदवाणी, ब्रह्मज्ञान का ही प्रसार है संस्कृत,
भारतवासियों के लिए शिष्टाचार है संस्कृत,
हर श्रोता का भी करती उपकार है संस्कृत ।

प्रबुद्धजनों के लिए गंगा की धार है संस्कृत,
जड़मति के लिए तो केवल भार है संस्कृत,
आधुनिकता की दौड़ में लाचार है संस्कृत,
कम पढ़ने वाले ? क्या बीमार है संस्कृत ।

वेद–वेदांग, श्रुति–स्मृति पूरा परिवार है संस्कृत,
उपनिषद् पुराण भी करते अंगीकार है संस्कृत,
दुर्जन–दुराचारी का भी करती उद्धार है संस्कृत,
श्रद्धावान् का करती सत्कार है संस्कृत ।

नैतिकता सद्‌गुणों का प्रचार है संस्कृत,
मानव कल्याण हेतु पतवार है संस्कृत,
गीता में ईश्वर का अवतार है संस्कृत,
सनातन धर्म रूप साकार है संस्कृत ।

वाणी का सुन्दर श्रृंगार है संस्कृत,
सरस्वती का कण्ठहार है संस्कृत,
दुष्कर्मों का कुल संहार है संस्कृत,
ब्रह्म का साक्षात्कार है संस्कृत ।

आयुर्वेद के माध्यम से उपचार है संस्कृत,
सूत्र पढ़ो तो भाषा में सुधार है संस्कृत,
व्याकरण से हिन्दी पर अधिकार है संस्कृत,
कर्मकाण्ड, ज्योतिष में रोजगार है संस्कृत ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्वामी विवेकानन्दः जीवन अते उपदेश (पंजाबी), बैलूर मठ
मूल लेखक ब्रहमचारी अमल – अनु० दिनेश वशिष्ट मखन लाल
रामकृष्ण मठ, हैदराबाद ।

2. स्वामी विवेकानन्द – द फ्रैंड आफ आल – द रामाकृष्ण मिशन
इन्स्टीच्यूट आफ कल्चर–कलकता ।

3. विवेकानन्द – हिंज काल टू द नेशन अद्वैत – आश्रम–कलकता

4. श्री राम कृष्ण उपदेश – रामकृष्ण मठ–नागपुर ।

5. युग पुरुष स्वामी विवेकानन्द वाणी
लेखक आनन्द यादव–लक्ष्मी प्रकाशन दिल्ली ।

6. श्रीमद् भगवद्गीता – गीता प्रैस गोरखपुर ।

7. विप्र स्मारिका : स्वामी विवेकानन्द विशेषांक

8. वाणी स्वामी विवेकानन्द – गुरु गोबिन्द सिंह ट्रस्ट, कोटकपूरा।

9. स्वामी विवेकानन्द – जीवन व सन्देश –
सुश्री निवेदिताभिड़े आकाशवाणी प्रकाशन – जालन्धर

10. भारत जागो – विश्व जगाओ – सुश्री निवेदिताभिड़े
आकाशवाणी प्रकाशन – जालन्धर

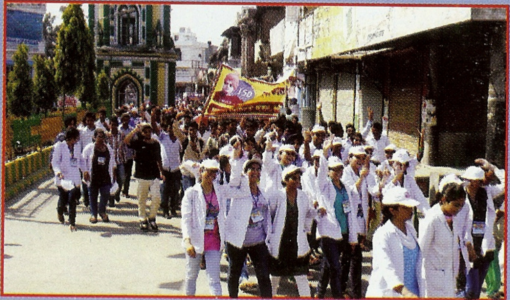
11. महान व्यक्तित्व भाग–9 चिलड्रस बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।

स्वामी विवेकानन्द 150वीं जन्म शताब्दी
भारत जागो दौड़









स्वामी विवेकानन्द 150वीं जन्म शताब्दी
नगर शोभायात्रा शुभारम्भ



